ओ३म्

ऋग्वेद यजुर्वेद

पंच गौड़ मध्ये मुख्य आदि गौड़

वैदिक पूजा पद्धति

एवं

ब्राह्मणोत्पत्ति

प्रकाशक :
पं० चेतराम वशिष्ठ ग्राम पत्रालय, रावली
तं० फिरोजपुर झिरका पिन– १२२१०४
चलभाष : ९८१२०६२६४१

सामवेद अथर्ववेद

ओ३म्

ऋग्वेद यजुर्वेद

पंच गौड़ मध्ये मुख्य आदि गौड़
वैदिक पूजा पद्धति एवं

ब्राह्मणोत्पत्ति

भेंटकर्ता:-
तारा चन्द पाराशर (रावली वाले)
मुकेश पाराशर, तेज प्रकाश
126, गोविन्द नगर, Opp. ओंकार होटल
देहली रोड, अलवर (राजस्थान)

लेखक
पं० लीलाधर शर्मा अग्निहोत्री (अलीगढ़)
प्रकाशक
पं० चेतराम वशिष्ठ ग्राम पत्रालय, रावली
तं० फिरोजपुर, झिरका पिन– १२२१०४
चलभाष : ९८१२०६२६४१

संस्करण: दूसरी बार

तिथि श्रावण शुक्ल पक्ष पूर्णिमा (रक्षा बन्धन) २०६४
सन् २८ अगस्त २००७ मंगलवार

मूल्य : 20.00

मुद्रक: जनता प्रिन्टिंग प्रेस, बड़कली चौक, नगीना (मेवात)
चलभाष : ९८१३६–८८९४६

सामवेद अथर्ववेद

धु अपने
ान्तिमय
वशिष्ठ

प्रकाशक का परिचय

मेरा जन्म ग्राम कुर्थला तहसील नूह जिला गुरूग्राम (पंजाब) में स्व नाम धन्य स्वः पूज्य पिता श्री पं० नानगराम वशिष्ठ के घर विक्रम सम्वत् 1976 तदनुसार अंग्रेजी तारीख 1919 को हुआ। पिता श्री बाल्यकाल से ही धार्मिक प्रवृत्ति के थे, क्योंकि गर्भकाल से उनके पिता (मेरे पितामह) श्री पं० मनीराम वशिष्ठ जी ने वैदिक संस्कारों की जन्म घुट्टी देकर पाला–पोषा था तथा कुछ पूर्व जन्म के संस्कार (जो सूक्ष्म शरीर के साथ रहते हैं,) उनके साथ थे। दोनों प्रकार के संस्कार का समन्वय उनके हृदय पटल पर अंकुर की भाँति फूटने लगे। भविष्य में ये ही संस्कार वट वृक्ष का रूप धारण करके आदि गौड़ ब्राह्मण समाज की सेवा व प्रेरणा का स्रोत बन गए। मुझे भी उन्होंने एक अच्छा पुरोहित बनने के संस्कार देकर समाज की सेवा करने के लिए प्रेरित किया, उनके समय में जहाँ 2 ब्राह्मण समाज की बैठकें होती थी मुझे अपने साथ ले जाया करते थे।

मेरे पिता श्री ने पं० खूबचन्द भारद्वाज निवासी साकरस को कुर्थला में वैदिक संस्कारों की शिक्षा देकर उनको एक पुरोहित व लेखक बनने का मार्ग दर्शन किया। कुछ समय बाद वे आदि गौड़ ब्राह्मण सभा मेवात के मंत्री पद पर भी रहे।

भगवत् कृपा एवं पिता श्री के पुण्य–प्रताप व आशीर्वाद प्राप्त करके

मैंने इस पुस्तक का प्रकाशन करवाया है।

मेरा प्रकाशन करने का मुख्य उद्देश्य केवल ब्राह्मण बन्धु अपने वैदिक पथ पर चलकर ब्राह्मत्व को पुनः प्राप्त करके जीवन को शान्तिमय बनाकर मोक्ष के अधिकारी बनें।

पं० चेतराम वशिष्ठ

सादर समर्पण

धर्म का आचरण करना, ऋषि–मुनियों का है सन्देश।
प्रातः उषा काल में, दे सद बुद्धि हमें परमेश॥
हम सदा भारती की, प्रीती से अराधना करते रहें।
सद् प्रेम से, संलग्न से, ज्ञान पीयूष पीते रहें।
वेद ज्योति को जलाकर, अज्ञानता हरते रहें॥

भेंटकर्ता:-
तारा चन्द पाराशर (रावली वाले)
मुकेश पाराशर, तेज प्रकाश
126, गोबिन्द नगर, Opp. झंकार होटल
देहली रोड़, अलवर (राजस्थान)

प्रस्तावना

सत्य सनातन वैदिक धर्म आदि सृष्टि से चला आ रहा है। क्योंकि यह ईश्वर प्रदत्त धर्म है। हमारे प्राचीन महर्षियों ने मनीषियों न वेदोक्त धर्म एक ही है ऐसा माना है। नूतन का अर्थ है–नया, पुरातन का अर्थ है–पुराना और सनातन का अर्थ है– जो न कभी नया था और न पुराना होगा, वह सनातन धर्म है। जो सृष्टि के आदि में प्रकट होता है और अन्त काल तक रहता है।

संसार का सबसे पहला धर्म वैदिक धर्म है। संसार की सबसे पहली संस्कृति वैदिक संस्कृति है। संसार की सबसे पहली सभ्यता वैदिक सभ्यता है। संसार की सबसे पहली जाति आर्य जाति है। संसार का सबसे पहला देश आर्यावर्त है। तभी तो महर्षि मनु ने 'मनुस्मृति' में यह घोषणा कि है–

एतदेश प्रसूतस्य सका शादएतद्देश जन्म नः।
स्वं स्वचरित शिक्षेरन पृथिव्या सर्व मानवाः॥

अर्थात् इस आर्यावर्त ब्रह्मावर्त्त देश के आदि ब्राह्ममणों से समस्त भूमण्डल के मानव अपने–अपने चरित्र की उनके चरणों में बैठकर शिक्षा ग्रहण करें। आदि काल के आदि ब्राह्मणों ने सारे संसार को ज्ञान विज्ञान की शिक्षा दी है। (वैदिक सम्पत्ति पृ. ३४६)

विदेशी लोग भारतवर्ष में विद्या पढ़ने आया करते थे और हमारे ऋषि, मुनि, संन्यासी विद्वान विदेशों में वैदिक धर्म का प्रचार करने जाया करते थे। इतिहास से पता चलता है कि ईरान, सीरिया, ग्रीस और चीन आदि देशों के लोग यहाँ शिक्षा ग्रहण करने के लिए आया करते थे, यहाँ वाले भी आस्ट्रेलिया, अमेरिका, सीरिया, ग्रीस और चीन आदि देशों में शिक्षा देने के लिए जाया करते थे। ऋषि पुलस्त्य धर्म प्रचार के लिए आस्ट्रेलिया गए, वेद व्यास ऋषि अमेरिका और बलख को गए बौद्ध संन्यासी पोलिस्टाइन ग्रीस और चीन को जाते रहे अर्थात् ऋषि, मुनि, ब्राह्मण, संन्यासी, वैदिक धर्म का प्रचार–प्रसार दूसरे देशों में करते रहे और वहाँ के असभ्य लोगों में सभ्यता का संचार होता रहा।

ईरान का जामास्य हकीम भारतवर्ष में प्रति वर्ष आया करता था और जैमिनी ऋषि का शिष्य हुआ था। इसी तरह तिब्बत में हजरत ईसा का पुराना जीवन चरित्र मिला है। उससे पाया जाता है कि हजरत ईसा ने भारत में आकर धर्म के सिद्धान्त सीखे और बहुत दिन तक काशी आदि स्थानों में रहे। चीनी निवासी सोमाचीन, फाह्यान और ह्यूनसांग यात्री भी विक्रम की चौथी शताब्दी में यहाँ से अनेक पुस्तकें ले गए और संस्कृत के जानने वाले अनेकों ब्राह्मण ले गए और स्वयं अनेकों बात सीख गए। तभी तो राष्ट्र कवि मैथिलीशरण गुप्त ने जोरदार शब्दों में भारत की महिमा का बखान किया है–

संसार को पहले हमी ने ज्ञान मिक्षा दान की।
आचार की, व्यवहार की, व्यापार की, विज्ञान की॥

ब्राह्मण ने आदि काल से ही अनेक समूहों में विभक्त होकर देश–देशान्तर के कोने–कोने में निवास करके चराचर जगत के सूक्ष्म रहस्यों को सर्वप्रथम साक्षात्कार किया उन्हें समझा परखा तथा जीवन अनुकूल बनाया उसने सामाजिक जीवन की ललित कलाओं के माध्यम से सरस तथा अनेक विध भौतिक उपकरणों आविष्कारों से समृद्ध एवं सम्पन्न बनाया।

वैदिक ज्ञान–विज्ञान ने मानव समाज को सुसंस्कृत, सुशिक्षित और सभ्य बनाया। ब्रह्म से उत्पन्न ब्राह्मण समस्त भौतिक, दैविक तथा अध्यात्मिक शक्तियों का एक मात्र सृष्टा बन गया। फलस्वरूप आगे चलकर ब्राह्मण संस्कृति और संस्कारों का प्रतीक बन गया। वेदाध्ययन और अध्यापन इन दोनों कामों में ब्रह्मा यह आदि ब्राह्मण आदि आचार्य और आदि गुरु है। क्योंकि ब्राह्मण पथ–प्रदर्शक, धर्म शिक्षक है। चारों वर्णों का धर्म गुरु है तभी तो विद्या ब्राह्मण के पास गई और कहने लगी–

विद्याहवै ब्राह्मण मानगाम गोपाय मां शेवधिष्टेऽहमस्मि।
असूयकाया नृजवेऽयवाय न मा ब्रूयावीर्य बती तथास्याम॥
निरुक्त २/१/१०

अर्थात् हे ब्राह्मण! मैं आपकी निधि हूँ अतः मेरी रक्षा करो, जो निन्दक, कुटिल और असंयमी हो उसके लिए मेरा उपदेश मत करो।

यमेवः विद्याः शुचिमप्रमतं मेद्याविनं ब्रह्मचर्योपपन्नम्।
यस्ते न दुह्येत कतमच्च नाह तस्मै मां ब्रूयानिधि पाय ब्राह्मण॥
इति॥ निरुक्त २/१/१०

अर्थात् जो पवित्रात्मा, प्रमाद रहित, बुद्धिमान, ब्रह्मचर्य से युक्त आपसे वैर न करता है उसके लिए मेरा उपदेश करें।

क्रियावन्तः श्रोत्रिया ब्रह्मनिष्ठाः स्वयं जुहवतराकर्षि श्रद्धयन्तः।
तेषामेवैतां ब्रह्मविद्यां वदेत शिरोवतं विधिवद् यैस्तु चीर्णम्॥
मु० उपनिषद् ३/२/१०

अर्थात् जो लोग पुरुषार्थी वेद को पढ़ने वाले, ईश्वर विश्वासी, श्रद्धालु है उन्हीं को वह विद्वान उपदेश करे। अतः ब्राह्मण को सदैव विद्या निधि की रक्षा करके वृद्धि करनी चाहिए।

चारों वर्ण अपने–अपने गुण–कर्म–स्वभाव से महान है, बड़े है।

विप्राणां ज्ञानतोज्यैष्ठम्, क्षत्रियाणां तु वीर्यतः।
वैश्यानाम् धान्य धनतः, शूद्राणाम् मेवजन्मतः॥ मनुस्मृति

अर्थात् ब्राह्मण ज्ञान से बड़ा माना जाता है, क्षत्रिय बल से बड़ा होता है, वैश्य धन धान्य से बड़ा होता है और शूद्र तीनों वर्णों की सेवा सुश्रुषा से बड़ा माना जाता है।

युग के बदलते परिवेश में सभी प्रकार के ब्राह्मण मौजूद है। अतः वर्तमान में सारे ब्राह्मणों की विभिन्नता का संगठन अत्यन्त आवश्यक है। अनेक भ्रान्तियाँ दन्त कथाओं, पाखण्डों के वशीभूत होकर आज ब्राह्मण वर्ग और ब्राह्मण वर्ण अपने भाईयों को अपने ऋषि, मुनियों के पुत्रों को पहचानने में असमर्थ है। एक–दूसरे को नीचा कहकर, झूठे मिथ्या, अहंकार का प्रदर्शन करते हैं। अत्यन्त शर्म की बात है।

अकड़ ऐंठ अभिमान में गए बहुत दिन बीत।
आओ रल मिल बैठिए, जिससे बढ़े परस्पर प्रीत॥

आज समय की पुकार है कि सभी ब्राह्मण एक ही झण्डे के नीचे एकत्रित होकर अपने ऋर्षि, महर्षियों की धरोहर को पहचान कर उसको नष्ट न होने दे तभी उनके ऋण से उऋण होकर संगठित होकर संसार के

पुनः गुरु बनकर, अज्ञानता को दूर भगाकर हम और आप ब्रह्मदेव, भूदेव कहला सकते हैं।

मेरी अन्त में यह प्रार्थना है, यह पुस्तक मैंने आद्योपान्त पढ़ी है। इसमें ब्राह्मण की दिनचर्या, सन्ध्या, वन्दना और ऋषि गोत्र, शासन आदि सभी जानकारी इसमें है। स्वयं अपनी जानकारी लें तथा दूसरों को भी दे। यह पुस्तक हम सब का मार्ग दर्शन करती रहेगी। मुझे ऐसी आशा है।

विदुषामनुचरः

वैदिक पुरोहित
पं० मूलचन्द वशिष्ठ (गौड़ रत्न)
ग्राम –पो०– रावली
जिला–मेवात (नूह) हरियाणा
पिन : १२२१०४
दूरभाष: 981268, 278754
जिला नूह (मेवात) हरियाणा– १२२१०४

दो शब्द .....

हम कौन थे क्या हो गए और क्या होगे अभी।
आओ विचारे आज मिलकर ये समस्या सभी॥

आज के इस भौतिकवादी युग में द्विज बन्धु अपने धर्म–कर्म, अपनी प्राचीन संस्कृति–सभ्यता को भूलकर पश्चिमी सभ्यता का अन्धानुकरण कर रहे है। ब्राह्मण बन्धुओं की वर्तमान स्थिति को देखकर रोना आता है। क्योंकि वैदिक काल की भाँति ब्राह्मणों का सम्मान–सत्कार नहीं हो रहा है। इसका मूल कारण देखने में आया है कि विप्र बन्धु अपने वदोक्त धर्म कार्यों से दूर होते चले गए और याचक वृत्ति को अपनाते जा रहे है। भिक्षा वृत्ति करना ब्राह्मण के लिए बहुत बड़ा पाप है। इसी को देखते हुए जनसाधारण कह देता है कि ब्राह्मण तो 'माँगनी खानी कौम है' जबकि धर्म शास्त्रों का आदेश है कि **'ब्रह्म वैब्राह्मण'** जो पर ब्रह्मपरमात्मा को तथा वेद को जानता और मानता है वहीं 'ब्राह्मण' है। तभी तो ब्राह्मण परम पूज्य है, भूदेव है, चारों वर्णों का गुरु है, चारों वेद उसके मुख में है। पृथ्वी पर जितने तीर्थ है सब तीर्थ ब्राह्मण के दक्षिण पाद में है। इसी वास्ते ब्राह्मण की पूजा करने से सब देवों की पूजा होती है। पृथ्वी पर ब्राह्मण जो है वह विष्णु रूप है। इससे जिसको कल्याण की इच्छा होवे उसे ब्राह्मणों का अपमान नहीं करना चाहिए। 'ब्रह्म द्वेषी विनश्यति' अर्थात् जो ब्राह्मणों से ईर्ष्या द्वेष करता है, रखता है उसका शीघ्र ही सत्यनाश हो जाता है।

समय तेजी से भागा जा रहा है, यदि ब्राह्मण वर्ग अपनी प्राचीन मान–मार्यादा को प्राप्त करना चाहता है तो उसे शीघ्र ही वेदादि धर्म शास्त्रों के आदेशों का पालन करते हुए आगे बढ–चढकर ब्राह्मत्व के पद को पुन: पा सकते हैं। दानवीर कर्ण कहते हैं– कि मैं इन्द्र के बज्र से नहीं डरता और न महादेव के त्रिशूल से डरता हूँ न यमराज के डण्डे से डरता हूँ न अग्नि, न सूर्य, न चन्द्र इत्यादि से डरता हूँ, मुझे डर है तो केवल उससे कहीं ब्राह्मणों के कुल का अपमान न हो जावे। मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम कहते हैं – कि ब्राह्मणों के ही प्रसाद से मैं धरणी धर हूँ, ब्राह्मणों के पुण्य

प्रताप से मैं धनुष तोड़कर सीता को विवाह लाया। द्विजो के प्रताप से लंका जीती, ब्राह्मणों के प्रसाद से मेरा नाम राम नाम है।

लगभग 24 वर्ष पूर्व कुछेक हमारे ब्राह्मण बन्धुओं ने घर आकर कहा कि पण्डित जी हमें अपने गोत्र, शासन पदवी, शाखा एवं वेद आदि का कुछ पता नहीं है कि कौनसे ब्राह्मण है तथा हमारा कहाँ से उद्‌गम हुआ है। आप हमारा कुछ भला चाहते हैं तो कोई ब्राह्मणों की उत्पत्ति के बारे में पुस्तक छपवाये आपकी बड़ी कृपा होगी।

उन द्विज–बन्धुओं के आग्रह पर कुछ खोज–बीन कर स्व० पं. सुन्दरलाल कश्यप जी के सुपुत्र पं० कालूराम कश्यम निवासी बसई मेव के यहाँ से ब्राह्मोत्पत्ति पुस्तक प्राप्त की जिसके लेखक स्व० पं० लीलाधर जी अग्निहोत्री अलीगढ़ निवासी वैदिक विद्वान थे। मैंने उसका प्रथम संस्करण लगभग 1982 में प्रकाशित करवाया था, अब दूसरा संस्करण छपकर आपके हाथ में है।

मैं उन बसई मेव वालों का सदैव आभारी रहूँगा। मेरा इस पुस्तक का प्रकाशन करवाने का मुख्य उद्देश्य यही रहा है कि हमारे समस्त ब्राह्मण बन्धु वेदोक्त रीति अनुसार अपनी दिनचर्या करते रहे इसमें पंच महायज्ञों का विस्तृत वर्णन है जो हमें प्रतिदिन करने चाहिए। मैं अन्त में निवेदन करता हूँ कि मेरे प्रमादवश अशुद्धियाँ, त्रुटियाँ या मुद्रक की भूल से हुई हो तो उन्हें विज्ञ जन संशोधन कर मेरी त्रुटियों को क्षमा करते हुए मुझे अवगत करायेंगे तो उनका अत्यन्त आभारी रहूँगा। सर्वे भवन्तु सुखिन: की मंगल कामनाओं के साथ–

विनीत
पं० चेतराम वशिष्ठ
रावली

[ओ३म सच्चिदानन्देश्वराय नमो नमः]

प्रार्थना

ओ३मयोभूतञ्च भव्यञ्च सर्वं यश्चाधितिष्ठति।
स्वर्यस्य च केवलं तस्मै ज्येष्ठाय ब्रह्मणे नमः। अथर्व०

अर्थ– जो परमेश्वर भूत, भविष्य और वर्तमान इन तीनों कालों के बीच में जो कुछ होता है, उन सब व्यवहारों को यथावत जानता है, जो सब जगत को जानता, रचता, पालता और प्रयल करता है, संसार के सब पदार्थों का अधिष्ठाता अर्थात् स्वामी है। सब कालों के ऊपर विराजमान है, जिसका सुख ही केवल स्वरूप है जो कि मोक्ष और व्यवहार सुख का भी देने वाला है, जिसको लेशमात्र भी दुःख नहीं होता, जो आनन्द घन परमेश्वर सबसे बड़ा और सब सामर्थ्य से युक्त है। उस परब्रह्म को हमारा बारम्बार नमस्कार है।

ओ पुनन्तु मादेवजनाः पुनन्तु मनसाधियः।
पुनन्तु विश्वा भूतानि जातवेदः पुनीहिमा॥ यजु० १९/३९

अर्थ– हे जातवेद परमेश्वर आप सब प्रकार से मुझे पवित्र कीजिए और जो आपके भक्त आपकी आज्ञा पालते हैं, अथवा जो विद्वान ज्ञानी पुरुष कहाते हैं, वे मुझको विद्या दान से पवित्र करे। और आपके दिये विशेष ज्ञान वा आपके ध्यान से हमारी बुद्धियाँ पवित्र हो, शुद्ध हो तथा संसारी जीव आपकी महान कृपा से पवित्र होकर आनन्द में रहे।

–ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका

हे सर्व व्यापक! हे दिव्य गुण–सम्पन्न परमात्मन्! आप अनन्त काल से अपने उपकारों की वर्षा किए जाते हो। आपके असीम उपकारों की वर्षा से प्राणीमात्र की कामनाऐं प्रति क्षण पूर्ण हो रही है। हे भगवन्! आपका हृदय स्नेह और वात्सल्य से परिपूर्ण है। अतः हे दयालु कृपालु परमात्मन् आप हम सब पर सुख शान्ति की वर्षा करे।

हे करूणानिधि! हमारे कल्याण के लिए आप हमारे हृदय में विराजमान है। बाहर, भीतर सब कहीं आपका ही प्रकाश है, फिर भी स्वार्थ, अज्ञान और भ्रमवश हमे न कुछ सुनाई देता है न कुछ दिखाई देता है। हे ज्योतिर्मय प्रभो आप हमें तेज ओज प्रदान करो जिससे फैला हुआ मोह जाल भस्म हो जाये और हम आपके निर्मल, शुद्ध पवित्र सुन्दर स्वरूप का दर्शन कर सके।

हे मंगलमय प्रभो! सब शुभ कर्मों के लिए आवश्यक शक्ति आपसे ही प्राप्त हुई है, आप प्रेरणा स्वरूप है। इसलिए परमेश देव! हम सब आपके सम्मुख कृतज्ञता पूर्वक नतमस्तक है। हे जगदीश्वर! हम आपको बारम्बार नमस्कार करते हैं।

हे सत्य स्वरूप! हे शिव स्वरूप भगवन्! आप आनन्द के स्रोत है। जो भी आपकी चरण–शरण में आता है उसे कृतार्थ कर देते हैं। बस, शान्ति तो आपको नमन करने में है, सब बुछ आपके चरणों में समर्पित कर देने में है। इसलिए हे जगदीश्वर! हे करूणानिधि! आपको बारम्बार नमन करते हुए सब कुछ आपको ही समर्पित करते हैं, इसमें मेरा कुछ नहीं है। हे विश्व नियन्ता सब कुछ आपका ही है और आपको ही समर्पित है। हे प्रभो! तेरा तुझ को सौपते क्या लागे मेरा?

हे पूजनीय देव! हे भगवन! मेरा यह जीवन–पुण्य जैसा है वैसा आपके चरणों में समर्पित है। इसे अपनी सेवा में लेकर कृतार्थ करो। उद्धार करो। सबका बेडा पार करो। प्रभो! हम सबकी यही प्रार्थना है, यही याचना है, स्वीकार करो, स्वीकार करो।

(ओ३म शान्तिः शान्तिः शान्तिः)

अथ ब्रह्म यज्ञः

प्रातः कालीन मन्त्राः

प्रातः काल की सुन्दर बेला में सर्वप्रथम उठके परमेश्वरा का चिन्तन स्मरण और गुण गान करना चाहिए कि प्रभु हमारा दिन अच्छा व्यतीत हो। सत्य, तप और पुरुषार्थ से हम यश प्राप्त करे। प्रातः कालीन प्रार्थना मन्त्र इस प्रकार है–

ओ३म् प्रातरग्नि प्रातरिन्द्र हवामहे प्रातर्मित्रा वरूणा प्रातरश्विना।
प्रातर्भगं पूषणं ब्रह्मणस्पतिं प्रातः सोममुत रूद्रं हुवेम॥ १॥
ओ३म् प्रातर्जित भगमुग्रं हुवेम वयं पुत्रमदितेर्यो विधर्ता।
आध्रेश्चिद्यं मन्यमानस्तु रश्चि द्राजाचिद्यं भगं भक्षीत्याह॥ २॥
ओं भगप्रणेत र्भग सत्यराधो भगेमां धियमुदवा ददन्नः।
भगप्रणो जनय गोमिरश्वै र्भग प्र नृमिर्नृवन्तः स्याम॥ ३॥
ओम् उतेदानी भगवन्तः स्यामोत प्रपित्व उतमध्ये अह्नाम्।
उतोदिता मघबन्त सूर्यस्य वयं देवानां सुमतौ स्याम॥ ४॥
ओ भंग एव भगवां अस्तु देवास्तेन वयं भगवन्त स्याम।
तं त्वा भग सर्व इज्जो हवीति स नो भगपुर एता भवेह॥ ५॥

ऋषि आदेश

इस प्रकार परमेश्वर की प्रार्थना उपासना करनी। तत्पश्चात, शौच, दन्त, धावन, मुख प्रक्षालन करके स्नान करे। पश्चात् एक कोश एकान्त जंगल में जा के योगाभ्यास की रीति से परमेश्वर की उपासना कर सूर्योदय अथवा घड़ी आध घड़ी दिन चढे तक घर में आके सन्ध्योपासनादि नित्य कर्म यथा विधि उचित समय में किया करें। (संस्कार विधि)

सन्ध्या वन्दना

आवश्यक निर्देश–

सन्ध्या– भली–भाँति ध्यान किया जावे परमेश्वर का जिसमें वह सन्ध्या है।

रात और दिन के संयोग समय दोनों सन्धियों में सब मनुष्यों को परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना करनी चाहिए।

एकान्त स्थान में अपने आत्मा, मन और शरीर को शुद्ध और शान्त चित्त हो करके सन्ध्या करनी चाहिए।

शुद्ध स्थान, पवित्रासन, जिधर की ओर का वायु हो उधर मुख करके नाभि के नीचे से मूलेन्द्रिय को ऊपर संकोच करके हृदय के वायु को बल से बाहर निकाल के यथा शक्ति रोके। जब न रोक सके तब धीरे–धीरे नासिका से प्राण वायु भीतर ले फिर उसको यथा शक्ति रोके। यह एक प्राणायाम हुआ। कम से कम तीन प्राणायाम् करे। इस समय परमेश्वर की प्रार्थना उपासना हृदय से करे।

प्रारम्भ में– सिद्धासन में सीधे बैठकर ओ३म् का उच्चारण तीन बार पूरे श्वास के साथ करे।

ओ.....३.....म्! ओ३म्.....ओ३म्॥

गायत्री मन्त्र (गुरु मन्त्र)

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धी महि
धियो यो नः प्रचोदयात्॥ यजु० ३६/३

अर्थ– (औ) यह प्रभु का मुख्य नाम है। वह (भूः) प्राणों का प्राण (भुवः) दुःख विनाशक (स्वः) सुख स्वरूप है। (तत्) उस (सवितुः) सकल जगत के उत्पादक (देवस्य) देव के (वरेण्यम्) ग्रहण करने योग्य (भर्ग) विशुद्ध तेज को हम (धीमहि) धारण करें (यः) जो ईश्वर (नः) हमारी (धियः) बुद्धियों को (प्रचोदयात्) सन्मार्ग में प्रेरित करें।

[आचमन यन्त्र]

जल पात्र से दाहिने हाथ की हथेली में जल लेकर निम्नलिखित मन्त्र को एक ही बार बोलकर तीन आचमन करें। इससे कण्ठस्थ कफ की थोड़ी सी निवृत्ति होती है। जल न हो तो, आचमन न करें।

ओ३म् शन्नो देवी रभिष्टय आपो भवन्तु पीतये।
शंयो रभि स्रवन्तु नः॥ यजु० ३६/१२

अर्थ– सर्वव्यापक, सबका प्रकाशक और सबको आनन्द देने वाला परमेश्वर मनोवाञ्छित सुख और पूर्णानन्द की प्राप्ति के लिए हमारा कल्याण करे तथा हम पर सुख शान्ति की सर्वदा वृष्टि करे।

[इन्द्रिय स्पर्श मन्त्राः]

बाये हाथ की हथेली में जल लेकर दायें हाथ की मध्यमा और अनामिका उगंलियों से जल स्पर्श करके पहले दायें और फिर बायें अंगों का निम्नलिखित मन्त्रों से स्पर्श करें।

ओं वाक् वाक्।	–	इससे मुख का दायां बायां भाग।
ओं प्राणः प्राणः।	–	इससे नाक का दायां और बायां भाग।
ओं चक्षुश्चक्षुः।	–	इससे दायीं और बायीं आँख।
ओं श्रोत्रं श्रोत्रं।	–	इससे दायां और बायां कान।
ओं नाभिः।	–	इससे टूंडी।
ओं हृदयम्।	–	इससे हृदय।
ओं कण्ठः।	–	इससे कण्ठ (गला)।
ओ शिरः।	–	इससे मस्तक।
ओं बाहुभ्यां यशोबलम्।	–	इससे दोनों बाहु (भुजाऐं)

अर्थ– हे प्रभु! मेरी वाक् इन्द्रिय और उसकी शक्ति बलवान हो, मेरी प्राण इन्द्रिय व प्राण शक्ति बलवान हो, मेरी आँखें व उनकी हश्य शक्ति बलवान हो। मेरी कर्णेन्द्रिय व श्रवण शक्ति बलवान हो। हे स्वामिन! मेरी नाभि, मेरा हृदय, मेरा कण्ठ और मेरा मस्तिष्क अपने–अपने कार्य में सक्षम व समर्थ होवें। मेरे दोनों हाथ बलवान व यशस्वी हो, मेरी हथेलियाँ और उनका पृष्ठ भाग भी सशक्त और यशस्वी हो।

[मार्जन मन्त्राः]

बायें हाथ में जल लेकर दायें हाथ की मध्यमा और अनामिका उगुंलियों से शरीर के अंगों पर निम्नलिखित मन्त्रों से मार्जन करे अर्थात् जल छिड़के।

ओं भूः पुनातु शिरसि।	–	इससे सिर पर।
ओं भुवः पुनातु नेत्रयोः।	–	इससे दोनों नेत्रों पर।
ओं स्वः पुनातु कण्ठे।	–	इससे कण्ठ पर।
ओं महः पुनातु हृदये।	–	इससे हृदय पर।
ओं जनः पुनातु नाभ्याम्।	–	इससे नाभि पर।
ओं सत्यं पुनातु पादयोः।	–	इससे दोनों पैरों पर।
ओं खं ब्रह्म पुनातु सर्वत्र।	–	इससे पुनः सिर पर।

अर्थ– हे प्राण स्वरूप प्रभो! आप हमारी बुद्धि को पवित्र कीजिए। हे दुःख विनाशक देव! आप हमारी नेत्रादि ज्ञानेन्द्रियों को पवित्र कीजिए। हे सुख स्वरूप, आप हमारी कण्ठ आदि कर्मन्दियों को पवित्र कीजिए, हे महान प्रभो! आप हमारे हृदय को महान कर पवित्र करो। हे सर्वोत्पादक प्रभो! आप हमारे नाभिस्थ जनन संस्थान को पवित्र कीजिए। हे दुरित दाहक अनन्त पराक्रमी प्रभो! आप हमें बुरे चाल चलन से बचाकर सन्मार्ग पर चलने की शक्ति प्रदान कर पैरों को पवित्र करो। हे सत्यस्वरूप अविनाशी भगवन्! आप हमारे मस्तिष्क को, बुद्धि की स्वानुभूति से पुनः–पुनः पवित्र कीजिए। आप परम पवित्र हो, कृपा कर हमें पूर्ण पवित्रता प्रदान कीजिए।

[प्राणायाम मन्त्राः]

शरीर को सीधा रख, दोनों हाथों की अधखुली–सी मुट्ठियों की पीठ घुटनों के ऊपर रखकर भीतर की वायु को बलपूर्वक बाहर निकालकर जितनी देर रोक सकें, बाहर ही रोके रखे, फिर धीरे–धीरे भीतर जाने दें और वहाँ भी कुछ देर रोकें। यह एक प्राणायाम हुआ। ऐसे कम से कम तीन और अधिक से अधिक २१ प्राणायाम् करें।

ओं भूः। ओं भवः। ओं स्वः। ओं महः। ओं जनः। ओं तपः। ओ सत्यम्।
तैत्ति० प्र० तैत्ति० प्र० १/२७

अर्थ– (ओ३म) सर्वरक्षक (भूः) प्राणस्वरूप (भवः) दुःख नाशक (स्वः) सुख स्वरूप (महः) बड़ा (जनः) पिता (तपः) दण्ड दाता ज्ञानस्वरूप (सत्यम्) सत्यस्परूप और अविनाशी है।

[अघमर्षण मन्त्रा:]

तत्पश्चात सृष्टि कर्ता परमेश्वर और सृष्टि क्रम का विचार नीचे लिखे मन्त्रों से करें और जगदीश्वर को सर्वव्यापक, न्यायकारी, सर्वत्र, सर्वदा सब जीवों के कर्मों के द्रष्टा को निश्चित मान के पाप की ओर अपने आत्मा और मन को कभी न जाने दें, किन्तु सदा धर्मयुक्त कर्मों का वर्तमान रखें। (संस्कार विधि)

ओ३म! ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्य जायत।
ततोरात्र्य जायत तत: समुद्रोऽअर्णव:॥ १॥
समुद्रादर्णवादधि संवत्सरोऽ अजायत।
अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतोवशी॥ २॥
सूर्याचन्द्र मसौ धाता यथा पूर्वम कल्पयत्।
दिवं च पृथिवी चान्तरिक्ष मथो स्व:॥ ३॥ ऋ० १०/१९०

अर्थ– ईश्वर के अनन्त सामर्थ्य से वेद विद्या और त्रिगुणात्मक प्रकृति उत्पन्न हुई। उसी परमात्मा के सामर्थ्य से प्रलय उत्पन्न हुआ और उसी परमात्मा से महा समुद्र उत्पन्न हुए॥ १॥

सारे ब्राह्माण्ड को सहज ही में अपने वश में रखने वाले परमेश्वर ने समुद्र की उत्पत्ति के पश्चात् संवत्सर–वर्ष और फिर इनके विभाग दिन–रात, क्षण, मुहूर्त आदि को रचा॥ २॥

सब जगत को धारण और पोषण करने वाले परमात्मा ने जैसे पूर्व कल्प में सूर्य और चन्द्र रचे वैसे ही इस कल्प में भी रचे है। ठीक उसी प्रकार द्युलोक, पृथिवी लोक, अन्तरिक्ष और आकाश में जितने लोक है उनका निर्माण भी पूर्व कल्प के अनुसार ही किया है॥ ३॥

[पुन: आचमन मन्त्र:]

ओ शन्नो देवी रमिष्टय आपोभवन्तु पीतेय शंयो रमि सवन्तु न:।

इस मन्त्र से पुन: तीन आचमन करे। तदनन्तर गायत्री आदि मन्त्रों के अर्थ विचार पूर्वक परमेश्वर की स्तुति अर्थात् परमेश्वर के गुणों और उपकारों का ध्यान कर पश्चात् प्रार्थना करें।

[मनसा परिक्रमा मन्त्रा:]

निम्नलिखित मन्त्रों से सर्व–व्यापक भगवान की स्तुति प्रार्थना करें।

इन मन्त्रों को पढ़ते जाना और अपने मन के चारों ओर बाहर भीतर परमात्मा को पूर्ण जानकर निर्भय, निश्शङ्क, उत्साही, आनन्दित और पुरुषार्थी रहना। (संस्कार विधि)

ओ३म प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षिता दित्या इषव:
तेम्यो नमोऽधिपतिम्यो नमो रक्षितृम्योनम इषुम्यो नम एम्योअस्तु।
यो३स्मान द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्मेदध्म:॥ १॥

अर्थ– पूर्व दिशा का स्वामी प्रकाश स्वरूप ईश्वर है। वह बन्धन रहित भगवान सब ओर से रक्षा करता है। सूर्य की किरणें उसके बाण अर्थात् रक्षा के साधन है। उन सबके गुणों के अधिपति ईश्वर के गुणों को हम लोग बारम्बार नमस्कार करते हैं। जो ईश्वर के गुण और ईश्वर के रचे पदार्थ जगत की रक्षा करने वाले है और पापियों को बाणों के समान पीड़ा देने वाले है उनको हमारा नमस्कार हो। जो अज्ञान से हम से द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं उन सबकी बुराई को उन बाण रूपी मुख के बीच में दग्ध कर देते हैं॥ १॥

ओम् दक्षिणा दिगिन्द्रोऽधिपतिस्तिरश्चिराजी रक्षिता दिव्या इषव:।
तेम्योनमोऽधिपतिम्यो नमो रक्षितृम्यो नम इषुम्यो नम ऐम्यो अस्तु।
यो३स्मान द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्मेदध्म:॥ २॥

अर्थ– दक्षिण दिशा में सम्पूर्ण ऐश्वर्य युक्त परमात्मा सब जगत का स्वामी है। कीट–पंतग, बिच्छू आदि से वह परमेश्वर रक्षा करने वाला है। ज्ञानी लोग उसकी सृष्टि में बाण के समान है। उन सबके गुणों के अधिपति ईश्वर के गुणों को हम लोग बारम्बार नमस्कार करते हैं। जो ईश्वर के गुण और ईश्वर के रचे पदार्थ जगत की रक्षा करने वाले है और पापियों को बाणों के समान पीड़ा देने वाले है उनको हमारा नमस्कार हो। जो अज्ञान से हमसे द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं उन सबकी बुराई को उन बाण रूपी मुख के बीच में दग्ध कर देते हैं॥ २॥

ओम् प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपति पृदाकु रक्षितान्नमिषव:। तेम्यो नमो
ऽधिपतिम्यो नमो रक्षितृम्यो नम् इषुम्यो नम ऐम्यो अस्तु।
यो३स्मान द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्मेदध्म:॥ ३॥

[अघमर्षण मन्त्राः]

तत्पश्चात सृष्टि कर्ता परमेश्वर और सृष्टि क्रम का विचार नीचे लिखे मन्त्रों से करें और जगदीश्वर को सर्वव्यापक, न्यायकारी, सर्वत्र, सर्वदा सब जीवों के कर्मों के द्रष्टा को निश्चित मान के पाप की ओर अपने आत्मा और मन को कभी न जाने दें, किन्तु सदा धर्मयुक्त कर्मों का वर्तमान रखें। (संस्कार विधि)

ओ३म! ऋतं च सत्यं चाभीद्धात्तपसोऽध्य जायत।
ततो रात्र्य जायत ततः समुद्रो ऽअर्णवः॥ १॥
समुद्रादर्णवादधि संवत्सरो ऽ अजायत।
अहोरात्राणि विदधद्विश्वस्य मिषतोवशी॥ २॥
सूर्याचन्द्र मसौ घाता यथा पूर्वम कल्पयत्।
दिवं च पृथिवी चान्तरिक्ष मथो स्वः॥ ३॥ ऋ० १०/१९०

अर्थ– ईश्वर के अनन्त सामर्थ्य से वेद विद्या और त्रिगुणात्मक प्रकृति उत्पन्न हुई। उसी परमात्मा के सामर्थ्य से प्रलय उत्पन्न हुआ और उसी परमात्मा से महा समुद्र उत्पन्न हुए॥ १॥

सारे ब्राह्माण्ड को सहज ही में अपने वश में रखने वाले परमेश्वर ने समुद्र की उत्पत्ति के पश्चात् संवत्सर–वर्ष और फिर इनके विभाग दिन–रात, क्षण, मुहूर्त आदि को रचा॥ २॥

सब जगत को धारण और पोषण करने वाले परमात्मा ने जैसे पूर्व कल्प में सूर्य और चन्द्र रचे वैसे ही इस कल्प में भी रचे है। ठीक उसी प्रकार द्युलोक, पृथिवी लोक, अन्तरिक्ष और आकाश में जितने लोक है उनका निर्माण भी पूर्व कल्प के अनुसार ही किया है॥ ३॥

[पुनः आचमन मन्त्रः]

ओ शन्नो देवी रमिष्टय आपोभवन्तु पीतेय शंयो रमि सवन्तु नः।

इस मन्त्र से पुनः तीन आचमन करे। तदनन्तर गायत्री आदि मन्त्रों के अर्थ विचार पूर्वक परमेश्वर की स्तुति अर्थात् परमेश्वर के गुणों और उपकारों का ध्यान कर पश्चात् प्रार्थना करें।

[मनसा परिक्रमा मन्त्राः]

निम्नलिखित मन्त्रों से सर्व–व्यापक भगवान की स्तुति प्रार्थना करें।

इन मन्त्रों को पढ़ते जाना और अपने मन के चारों ओर बाहर भीतर परमात्मा को पूर्ण जानकर निर्भय, निश्शङ्क, उत्साही, आनन्दित और पुरुषार्थी रहना। (संस्कार विधि)

ओ३म प्राची दिगग्निरधिपतिरसितो रक्षिता दित्या इषवः तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्योनम इषुभ्यो नम एभ्योअस्तु। यो३स्मान द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भेदध्मः॥ १॥

अर्थ– पूर्व दिशा का स्वामी प्रकाश स्वरूप ईश्वर है। वह बन्धन रहित भगवान सब ओर से रक्षा करता है। सूर्य की किरणें उसके बाण अर्थात् रक्षा के साधन है। उन सबके गुणों के अधिपति ईश्वर के गुणों को हम लोग बारम्बार नमस्कार करते हैं। जो ईश्वर के गुण और ईश्वर के रचे पदार्थ जगत की रक्षा करने वाले है और पापियों को बाणों के समान पीड़ा देने वाले है उनको हमारा नमस्कार हो। जो अज्ञान से हम से द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं उन सबकी बुराई को उन बाण रूपी मुख के बीच में दग्ध कर देते हैं॥ १॥

ओम् दक्षिणा दिगिन्द्रोऽधिपतिस्तिरश्चिराजी रक्षिता दिव्या इषवः। तेभ्योनमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम इषुभ्यो नम ऐभ्यो अस्तु। यो३स्मान द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भेदध्मः॥ २॥

अर्थ– दक्षिण दिशा में सम्पूर्ण ऐश्वर्य युक्त परमात्मा सब जगत का स्वामी है। कीट–पंतग, बिच्छू आदि से वह परमेश्वर रक्षा करने वाला है। ज्ञानी लोग उसकी सृष्टि में बाण के समान है। उन सबके गुणों के अधिपति ईश्वर के गुणों को हम लोग बारम्बार नमस्कार करते हैं। जो ईश्वर के गुण और ईश्वर के रचे पदार्थ जगत की रक्षा करने वाले है और पापियों को बाणों के समान पीड़ा देने वाले है उनको हमारा नमस्कार हो। जो अज्ञान से हमसे द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं उन सबकी बुराई को उन बाण रूपी मुख के बीच में दग्ध कर देते हैं॥ २॥

ओम् प्रतीची दिग्वरुणोऽधिपति पृदाकु रक्षितान्नमिषवः। तेभ्यो नमोऽधिपतिभ्यो नमो रक्षितृभ्यो नम् इषुभ्यो नम ऐभ्यो अस्तु। यो३स्मान द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्भेदध्मः॥ ३॥

अर्थ– पश्चिम दिशा में वरुण सबसे उत्तम परमेश्वर सबका राजा है। वह बड़े–बड़े अजगर सर्पादि विषधर प्राणियों से रक्षा करने वाला है। पृथिव्यादि पदार्थ उसके बाण के समान है अर्थात् श्रेष्ठों की रक्षा और दुष्टों की ताड़ना के निमित्त है। उन सबसे गुणों के अधिपति ईश्वर के गुणों को हम लोग बारम्बार नमस्कार करते हैं जो ईश्वर के गुण और ईश्वर के रचे पदार्थ जगत की रक्षा करने वाले है। और पापियों के बाणों के सामन पीड़ा देने वाले है उनको हमारा नमस्कार हो। जो अज्ञान से हमसे द्वेष करता और जिससे हम द्वेष करते हैं उन सबकी बुराई को उन बाण रूपी मुख के बीच में दग्ध कर देते हैं॥ ३॥

ओम् उदीची दिक् सोमोऽधिपतिः स्व जो रक्षिता शनि रिषवः।
तेम्यो नमोऽधपतिम्यो नमो, रक्षितृम्यो नम, इषुभ्यो नम एम्यो अस्तु।
योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्मे दध्मः॥ ४॥

अर्थ– उत्तर दिशा में सोम–शान्त्यदि गुणों से आनन्द प्रदान करने वाला जगदीश्वेर सब जगत का राजा है। वह अजन्मा और अच्छी प्रकार रक्षा के गुणों को हम लोग बारम्बार नमस्कार करते हैं। जो ईश्वरके गुण और ईश्वर के रचे पदार्थ जगत की रक्षा करने वाले है और पापियों को बाणों के समान पीड़ा देने वाले है उनको हमारा नमस्कार हो। जो अज्ञान वश हमसे द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं उन सबकी बुराई को उन बाण रूपी मुख के बीच में दग्ध कर देते हैं॥ ४॥

ओम् ध्रुवा दिग्विष्णु रधिपतिः कल्माषग्रीवो रक्षिता वीरुध इषवः।
तेम्यो नमोऽधिपतिम्यो नमो रक्षितृभ्योनम इषुभ्ये नम ऐभ्यो अस्तु।
योऽस्मान् द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जम्मे दध्मः॥ ५॥

अर्थ– नीचे की दिशा में विष्णु सर्वत्र व्यापक परमात्मा सब जगत का राजा है। काली ग्रीवा वाले प्राणियों से रक्षा करने वाला है। नाना प्रकार की वनस्पतियाँ उसके बाण के समान है। उन सबके गुणा के अधिपति ईश्वर के गुणों को हम लोग बारम्बार नमस्कार करते हैं और पापियों को बाणों के समान पीड़ा देने वाले है उनको हमारा नमस्कार हो जो अज्ञान वश हमसे द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं उन सबकी बुराई को उन बाण रूपी मुख के बीच में दग्ध कर देते हैं॥ ५॥

ओ३म ऊर्ध्वा दिग्बृहस्पति रधिपतिः श्वित्रो रक्षिता वर्ष मिषवः।
तेम्यो नेमोऽधिपतिम्योनमो, रक्षि तृम्योनमः इषुम्यो नम एम्योअस्तु।
योऽस्मान द्वेष्टि यं वयं द्विष्मस्तं वो जन्मे दध्यः॥ ६॥

अर्थ– ऊपर की दिशा में बृहस्पति, वाणी, वेदशास्त्र और आकाश आदि बड़ी–बड़ी शक्तियों का स्वामी सबका अधिष्ठाता है। अपने शुद्ध ज्ञानमय स्वरूप से हमारा रक्षक है। वृष्टि उनके बाण रूप अर्थात् रक्षा के साधन् है। उन सबके गुणों के अधिपति ईश्वर के गुणों को हम लोग बारम्बार नमस्कार करते हैं। जो ईश्वर के गुण और ईश्वर के रचे पदार्थ जगत की रक्षा करने वाले है और पापियों को बाणों के समान पीड़ा देने वाले है उनको हमारा नमस्कार हो। जो अज्ञान से हम से द्वेष करता है और जिससे हम द्वेष करते हैं उन सबकी बुराई को उन बाण रूपी मुख के बीच में दग्ध कर देते हैं॥ ६॥

[उपस्थान मन्त्राः]

तत्पश्चात् परमात्मा का उपस्थान अर्थात् परमेश्वर के निकट में और मेरे अति निकट परमात्मा है, ऐसी बुद्धि करके करें.....

(संस्कार विधि)

ओ३म् उद्वयंतमसस्परि स्वः पश्यन्तऽउत्तरम्।
देवं देवत्रा सूर्य भगन्म ज्योति रूत्तमम्॥ ७॥

अर्थ– हे परमेश्वर सब अन्धकार से अलग प्रकाश स्वरूप प्रलय के पीछे सदा वर्तमान देवों में भी देव अर्थात् प्रकाश करने वालों में प्रकाशक चराचर के आत्मा जो ज्ञानस्वरूप और सबसे उत्तम आपको जान के हम लोग सत्य से प्राप्त हुए है। हमारी रक्षा करनी आपके हाथ है, क्योंकि हम लोग आपके शरण है। (पञ्चमहायज्ञविधि)

ओम् उदुत्यं जाववेदसं देवं वहन्ति केतवः।
दृशेविश्वाय सूर्यम्॥ ८॥ यजु० ३३/३१

अर्थ– निश्चय से उत्कृष्ट चारों वेदों के उत्पादक ज्ञानस्वरूप ईश्वर को, सबको दिखाने के लिए संसार के पदार्थ पताका रूप बने हुए है। अर्थात् जिस प्रकार पताकाऐं, झण्डियाँ, निर्दिष्ट स्थान का बोध कराती

है, उसी प्रकार संसार के प्रदार्थ सूर्य, चन्द्र, नदी, पर्वत आदि अपने रचयिता भगवान की प्रतीती कराते हैं।

ओम् चित्रं देवानामुदगादनीकं चक्षुर्मित्रस्य वरुणस्याग्नेः।
आप्राद्यावा पृथिवीऽअन्तरिक्ष ँ सूर्यऽआत्माजगतस्तस्थुषश्च
स्वाहा॥ ३॥ यजु० ७/४२

अर्थ– जो सब देवों में श्रेष्ठ और बलवान है, जो सूर्य लोक, प्राण, अपान और अग्नि का भी प्रकाशक है, जो द्युलोक, अन्तरिक्ष और पृथिवी लोक में व्यापक है, जो जड़ और चेतन जगत का आत्मा जीवन है, वह चराचर जगत का प्रकाशक परमात्मा हमारे हृदयों में सदा प्रकाशित रहे।

ओ३म् तच्च क्षुर्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत। पश्येम शरदः शतं जीवेम
शरदः शत ँ श्रृणुयाम शरदः शतं प्रब्रवाम् शरदः शतमदीनाः
स्याम शरदः शतम् भूयश्च शरदः शतात्॥ ४॥ यजु० ३६/२४

अर्थ– जो ब्रह्म सबका द्रष्टा धार्मिक विद्वानों का परम हितकारक तथा सृष्टि के पूर्व, पश्चात और मध्य में सत्य स्वरूप से वर्तमान रहा और सर्व जगत उत्पादक ब्रह्म को हम लोग सौ वर्ष पर्यन्त देखें, जीने, सुने, उसी ब्रह्म का उपदेश करें और उसकी कृपा से किसी के अधीन न रहे। उसी परमेश्वर की आज्ञा पालन और कृपा से सौ वर्षों से उपरान्त भी हम लोग देखें, जीवे, सुनें, सुनावें और स्वतन्त्र रहे। (पञ्च महायज्ञ विधि)

गायत्री मन्त्रः

तदनन्तर नीचे लिखे गायत्री (गुरु मन्त्र) का अर्थ विचार पूर्वक मन से अधिकाधिक जप करें। गुरु मन्त्र का उच्चारण उसका अर्थ ज्ञान और तदनुसार आचरण करें।

ओ३म्। भुर्भुवःस्वः। तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि।
धियो यो नः प्रचोदयात्॥ यजु० ३६/३ ऋ० ३/३६/१०

अर्थ– (ओम्) यह मुख्य परमेश्वर का नाम है जिस नाम के साथ अन्य सब नाम लग जाते हैं। (भूः) जो प्राण का भी प्राण (भुवः) सब दुःखों से छुड़ाने हारा (स्वः) स्वयं सुख स्वरूप और अपने उपासकों को सब सुा की प्राप्ति करने हारा है। उस (सवितुः) सब जगत की उत्पत्ति करने वाले

सूर्यादि प्रकाशकों के भी प्रकाशक समान ऐश्वर्य के दाता (देवस्य) कामना करने योग्य सर्वत्र विजय कराने हारे परमात्मा का जो (वरेण्यम्) अति श्रेष्ठ ग्रहण और ध्यान करने योग्य (भर्गः) सब क्लेशों को भस्म करने हारा पवित्र शुद्ध स्वरूप है। (तत्) उसको हम लोग (धीमहि) धारण करें। (यः) यह जो परमात्मा (नः) हमारी (धियः) बुद्धियों को उत्तम गुण–कर्म स्वभावों में (प्रचीदयात्) प्रेरणा करें।

इसी प्रयोजन के लिए इस जगदीश की स्तुति–

प्रार्थना, उपासना करना और इससे मिनन और किसी को उपास्य इष्ट देव उकसे तुल्य वा उससे अधिक नहीं मानना चाहिए। (संस्कार विधि)

कविता–

तूने हमें उत्पन्न किया, पालन कर रहा है तू।
तुझसे ही पाते प्राण हम, दुखियों के कष्ट हरता है तू॥
तेरा महान तेज है, छाया हुआ सभी स्थान।
सृष्टि की वस्तु–वस्तु में, तू हो रहा है विद्यमान॥
तेरा ही धरते ध्यान हम, माँगते तेरी दया।
ईश्वर हमारी बुद्धि को, श्रेष्ठ मार्ग पर चला॥
दाता हमारी बुद्धि को, श्रेष्ठ मार्ग पर चला॥

अथ समर्पणम्

इस प्रकार से सब मन्त्रों के अर्थों से परमेश्वर की सम्यम् उपासना करके आगे समर्पण करें।

हे ईश्वर दयानिधे! भवत्कृपयाऽनेन जपो पासनादि कर्मणा।
धर्मार्थ काम मोक्षाणां सद्यः सिद्धि र्भवेन्नः॥

अर्थ– हे ईश्वर दयानिधे! आपकी कृपा से जो–जो उत्तम काम हम लोग करते हैं वे सब आपके समर्पण है। जिससे हम लोग आपको प्राप्त होके धर्म जो सत्य न्याय का आचरण करना है, अर्थ– जो धर्म से पदार्थों की प्राप्ति करना है, काम– जो धर्म और अर्थ से इष्ट भोगों का सेवन करना है और मोक्ष– जो सब दुःखों से छूटकर आनन्द में रहना है, इन चार पदार्थों की सिद्धि हमको शीघ्र प्राप्त हो। (पञ्च महायज्ञ विधि)

नमस्कार मन्त्र:

अन्त में निम्नलिखित मन्त्र द्वारा परमपिता को विनीत भाव से नमस्कार करें।

ओ३म् नमः शम्भवाय च मायोभवाय च नमः शंकराय च
मयस्काराय च नमः शिवाय च शिवतराय च॥

अर्थ— जो सुख स्वरूप और संसार के उत्तम सुखों को देने वाला, कल्याण का कर्त्ता, मोक्ष रूप और धर्म के कामों को ही करने वाला, अपने भक्तों को धर्म के कामों में युक्त करने वाला, अत्यन्त मंगल रूप और धार्मिक मनुष्यों को मोक्ष देने हारा है उसको हमारा बारम्बार नमस्कार हो।

(इति सन्ध्योपासन विधि)

अथेश्वर स्तुति प्राथनो पासना मन्त्राः

2 अथदेवयज्ञ (अग्निहोत्र) देवपूजा

अग्नेय परमेश्वराय जल वायु शुद्धि करणाय च होत्रं हवनं यस्मिन् कर्मणि क्रियते तदग्नि होत्रम..... अग्नि वा परमेश्वर के लिए जल और पवन की शुद्धि वा ईश्वर की आज्ञा पालन करने के अर्थ होत्र जो हवन अर्थात् दान करते हैं, उसे अग्नि होत्र कहते हैं।

—ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका।

यज्ञ उसको कहते हैं जिसमें विद्वानों का सत्कार यथा योग्य शिल्प अर्थात् रसायन जो कि पदार्थ विद्या, उसमें उपयोग और विद्यादि शुभ गुणों का दान, अग्निहोत्र आदि जिससे वायु, वृष्टि, जल, औषधि की पवित्रता करके सब जीवों को सुख पहुँचाना है, उसको उत्तम समझता हूँ। (स्वमनतव्यामनतव्य प्रकाश)

समय— जैस सायं प्रातः दोनों सन्धि बेलाओं में सन्ध्योपासना करें, इसी प्रकार स्त्री–पुरुष अग्निहोत्र भी दोनों समय में नित्य किया करें।

प्रातः काल पहले सन्ध्या और सायंकाल पहले अग्निहोत्र किया करें अर्थात् प्रातः सूर्योदय के उपरान्त और सांय सूर्यास्त के पूर्व ही अग्निहोत्र करें।

मन्त्रोच्चारण— सब संस्कारों में मधुर स्वर से मन्त्रोच्चारण यजमान ही करे। न शीघ्र, न विलम्ब से उच्चारण करे, किन्तु मध्य भाग जैसा कि जिस वेद का उच्चारण है करे। यदि यजमान न पढा हो तो इतने मन्त्र तो अवश्य पढ़ लेवे। (संस्कार विधि)

पुरोहित आदि का वरण— अच्छे विद्वान, धार्मिक, जितेन्द्रिय, कर्म करने में कुशल, निर्लोभी, परोपकारी, दुर्व्यसनों से रहित, कुलीन, सुशील, वैदिक मत वाले, वेदवित् एक, दो, तीन या चार का वरण करे, जो एक हो तो उसका (नाम) पुरोहित, दो हो तो ऋत्विक पुरोहित, तीन हो तो ऋत्विक् पुरोहित और अध्यक्ष और चार हो तो, होता, अध्वर्यु, उद्गाता और ब्रह्मा।

अथ ऋत्विग्वरण

यजमानोक्तिः— ओम् आवसोः सदेन सीद।

परमेश्वर का स्मरण करते हुए यजमान पुरोहित से प्रार्थना करे कि आप हमारे इस यज्ञ आसन पर विराजिये।

ऋत्विग्उक्तिः– ओ३म सीदामि–

अर्थ– पुरोहित बोले बहुत अच्छा मैं बैठता हूँ।

यजमानोक्तिः यजमान बोल–संकल्प

संकल्प

ओ३म् तत्सत् श्री ब्राह्मणो द्वितीय प्रहरार्द्धे वैवस्वत मन्वन्तरे अष्टाऽविंशति तमे कलियुगे कलि प्रथम चरणे अमुक सृष्टि गताब्दे अमुक विक्रमाब्दे अमुक संम्बत्सरे अमुक अयने अमुक ऋतौ अमुक मासे अमुक पक्षे अमुकतिथौ अमुक वासरे अमुक नक्षत्रे अमुकलग्न मुहूर्त च अत्र जम्बुद्वीपे भरतखण्डे आर्यावर्त्तान्तगर्ते अमुक प्रदेश अमुक

नगरे अमुक ग्रामे अग्रक गोत्रोत्पन्न अमुक नाम्ने अद्य अमुक कर्म करणाय पण्डितवरं भवन्त वृणे।

ऋत्विगुक्ति–पुरोहित बोले

ओ३म् वृतोऽस्मि– मुझे स्वीकार है।

शान्तचित्त होकर शुद्ध आसन पर बैठे और दाई हथेली में जल लेकर इन तीन मन्त्रों से तीन आचमन करें–

ओ३म् अमृतो पस्तरण मसि स्वाहा॥ १॥ इससे पहला

ओम् अमृतापिधानमसि स्वाहा॥ २॥ इससे दूसरा

ओं सत्यं यशः श्रीर्मयि श्रीः श्रयतां स्वाहा॥ ३॥ इससे तीसरा

अङ्ग स्पर्श मन्त्राः

तत्पश्चात बायीं हथेली में जल लेकर दायें हाथ की मध्यका और अनामिका अंगुलियों से नीचे दिये मन्त्रों से अङ्ग स्पर्श करे।

ओम् वाङ्म आस्येऽस्तु। इस मन्त्र से मुख

ओम् नसोर्मे प्राणोऽस्तु । इस मन्त्र से नासिका के दोनों छिद्र

ओम् अक्ष्णोर्मे श्रोत्रमस्तु। इस मन्त्र से दोनों आँखे

ओम् बाह्वोर्मे बलमस्तु। इन मन्त्र से दोनों बाहु (भुजा)

ओम् ऊर्वोर्मे ओजोऽस्तु। इस मन्त्र से दोनों जंघा

ओं अरिष्टानि मेडङ्गानि तनूस्तन्वा मे सह सन्तु। इस मन्त्र से सारे शरीर पर जल के छींट दें। –पारस्कर गृ० कण्डिका३ सूत्र २५

सब संस्कारो के आदि में निम्नलिखित मन्त्रों के पाठ और अर्थ द्वारा एक विद्वान वा बुद्धिमान ईश्वर की स्तुति–प्रार्थना और उपासना स्थिर चित्त होकर परमात्मा में ध्यान लगाके करे और सब लोग उसमें ध्यान लगाकर सुनें और विचारें–

ओ३म् विश्वानि देव सवितु र्दुरितानि परासुव।
यद् भद्रन्तन्न आसुव॥ १॥ यजु० ३०/३

अर्थ– हे सकल जगत के उत्पत्तिकर्त्ता, समस्त ऐश्वर्य युक्त शुद्ध स्वरूप सब सुखों के दाता परमेश्वर। आप कृपा करके हमारे समस्त दुर्गुण, दुर्व्यसना और दुःखों को दूर कर दीजिए और जो कल्याण कारक गुण, कर्म, स्वभाव और पदार्थ है, वह सब हमको प्राप्त कीजिए।

पद्य–

तू सर्वेश सकल सुख दाता, शुद्ध स्वरूप विधाता है,
उसके कष्ट नष्ट हो जाते, शरण तेरी जो आता है।
सारे दुर्गुण दुर्व्यसनों से, हमको नाथ बचा लीजे,
मङ्गलमय! गुण–कर्म पदारथ प्रेम–सिन्धु हमको दीजे॥

ओ३म् हिरण्य गर्भः समवर्त्त–ताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
सदाधार पृथिवी द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ २॥
– यजु० १३/४

अर्थ– जो स्वप्रकाश स्वरूप और जिसने प्रकाश करने हारे सूर्य–चन्द्रमादि पदार्थ उत्पन्न करके धारण किये है, जो उत्पन्न हुए सम्पूर्ण जगत का प्रसिद्ध स्वामी एक ही चेतन स्वरूप था जो सब जगत के उत्पन्न होने से पूर्व वर्तमान था, वह इस भूमि और सूर्यादि को धारण कर रहा है। हम लोग उस सुख स्वरूप शुद्ध परमात्मा के लिए ग्रहण करने योग्य योगाभ्यास और अति प्रेम से विशेष भक्ति किया करें।

पद्य–

तू ही स्वयं प्रकाश सुचेतन, सुख स्वरूप शुभ आता है।
सूर्य–चन्द्र लोकादिक को, तू रचता और टिकाता है॥
पहले था, अब भी तू ही है, घट–घट में व्यापक स्वामी।
योग, भक्ति, तप द्वारा तुझको, पावें हम अन्तर्यामि॥ २॥

ओ३म् य आत्मदा बलदा यस्य विश्व उपासते प्रशिषंयस्य देवाः।

यस्य छायाऽमृत यस्य मृत्युः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ ३॥

—यजु० २५/१३

अर्थ— जो आत्मा ज्ञान का दाता, शरीर, आत्मा और समाज के बल का देने हारा, जिसकी बात सब विद्वान लोग उपासना करते हैं और जिसका प्रत्यक्ष सत्यस्वरूप शासन, न्याय अर्थात् शिक्षा को मानते हैं, जिसका आश्रय ही मोक्ष—सुखदायक है, जिसका न मानना, अर्थात् भक्ति न करना ही मृत्यु आदि दुःख का हेतु है, हम लोग उस सुखस्वरूप सकल ज्ञान के देने पर हारे परमात्मा की प्राप्ति के लिए आत्मा और अन्तःकरण से भक्ति अर्थात् उसी की आज्ञा पालन करने में तत्पर रहें।

पद्य—

तू ही आत्मज्ञान बल दाता! सुयश विज्ञजन गाते हैं।
तेरी चरण—शरण में आकर, भव सागर तर जाते हैं।
तुझको ही जपना जीवन है, मरण तुझे बिसराने में।
मेरी सारी शक्ति लगे प्रभु, तुझसे लगन लगाने में॥ ३॥
ओम् यः प्राणतो निमिषतो महित्वैकऽ इन्द्राजा जगतो वभूव।
य ईशेऽस्य द्विपदश्चतुष्पदः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ ४॥

—यजु० २५/३

अर्थ— जो प्राण वाले और अप्राणि रूप जगत का अपनी अनन्त महिमा से एक ही विराजमान राजा है, जो इस मनुष्यादि और गौ आदि प्राणियों के शरीर की रचना करता है, हम लोग उस सुख स्वरूप सकल ऐश्वर्य को देने हारे परमात्मा के लिए अपनी सकल उत्तम सामग्री को उसकी आज्ञा पालन में समर्पित करके विशेष भक्ति करें।

पद्य— तूने अपनी अनुपम माया से, जग ज्योति जगाई है।
मनुज और पशुओं को रचकर, निज महिमा प्रगटाई है।
अपने हिय—सिंहासन पर, श्रद्धा से तुझे बिठाते हैं।
भक्ति भाव से भेट लेकर, शरण तुम्हारी आते हैं॥ ४॥
ओम् येन द्यौरुग्रा पृथिवी च दृढा येन स्व स्वभितं येन नाकः।
यो अन्तरिक्षे रजसो विमानः कस्मै देवाय हविषा विधेम॥ ५॥

—यजु० ३२/६

अर्थ— जिस परमात्मा ने तीक्ष्ण स्वभाव वाले सूर्य आदि और भूमि को धारण किया है, जिस जगदीश्वर ने सुख को धारण किया और जिस ईश्वर ने दुःख रहित मोक्ष को धारण किया है, जो आकाश में सब लोक—लोकान्तरों को विशेष मानयुक्त अर्थात् जैस आकाश में पक्षी उड़ते हैं, वैसे सब लोकों का निर्माण करता और भ्रमण कराता है, हम लोग उस सुखदायक कामना करने के योग्य परब्रह्म की प्राप्ति के लिए सब सामर्थ्य से विशेष भक्ति करें।

पद्य—

तारे रवि—चन्द्रादिक रचकर, निज प्रकाश चमकाया है।
धरणी को धारण कर तूने, कौशल अलख जगाया है।
तू ही विश्व—विधाता पोषक! तेरा ही हम ध्यार धरें।
शुद्ध भाव से भगवन्! तेरे भजनामृत का पान करे॥ ५॥
ओम् प्रजापते न त्वदेतान्यन्यो विश्वा जातानि परिता बभूव।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नोऽ अस्तु वयं स्याम पतयो रयीणाम्॥ ६॥

—ऋ० १०/१२/१०

अर्थ— हे सब प्रजा के स्वामी परमात्मन! आपसे भिन्न दूसरा कोई उन, इन सब उत्पन्न हुए जड़—चेतनादिकों को नहीं तिरस्कार करता है, अर्थात् आप सर्वोपरि हैं। जिस—जिस पदार्थ की कामना वाले हो के हम लोग भक्ति करें, आपका आश्रय लेवे और वाञ्छा करें उस उसकी कामना हमारी सिद्ध होवे, जिससे हम लोग धनैश्वर्यो के स्वामी होवें।

पद्य—

तुझसे बड़ा न कोई जग में, सबमें तू ही समाया है।
हे सर्वोपरि विभो! विश्व का, तूने साज सजाया है।
विद्या, बल, धन ऐश्वर्य दीजिए, यही भक्त को भाया है॥ ६॥
ओम् स नो बन्धु र्जनिता सविधाता धामानि वेद भुवनानि विश्वा।
यत्र देवाऽअमृत मान शानास्तृतीये धामन्नध्यैरयन्त॥ ७॥

अर्थ— हे मनुष्यों! वह परमात्मा अपने लोगों का भ्राता के समान सुखदायक, सकल जगत का उत्पादक, वह सब कामों का पूर्ण करने हारा, सम्पूर्ण लोक मात्र और नाम स्थान जन्मों को जानता है और जिस

सुख–दुःख से रहित नित्यानन्द युक्त मोक्षस्वरूप धारण करने हारे परमात्मा में मोक्ष को प्राप्त होके विद्वान लोग स्वेच्छापूर्वक विचरते हैं, वही परमात्मा अपना गुरु, आचार्य, राजा और न्यायधीश है। अपने लोग मिल के सदा उसकी भक्ति किया करें।

पद्य–

तू गुरु है, प्रवेश भी तू है, पाप–पुण्य–फल दाता है।
तू ही सखा बन्धु मम तू ही, तुझसे ही सब नाता है।
भक्तों को इस भव–बन्धन से तू ही मुक्त कराता है।
तू है अज, अद्वैव महाप्रभु, सर्वकाल का ज्ञाता है।
ओम् अग्नेनय सुपथा रायेऽ अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान्।
युयोध्यस्मज्जुहुराण मेनो भूयिष्ठान्ते नमऽउक्तिं विधेम॥ ८॥

– यजु० ४०/१६

अर्थ– हे स्वप्रकाश, ज्ञान स्वरूप, सब जगत के प्रकाश करने हारे सकल सुख दाता परमेश्वर! आप जिससे सम्पूर्ण विद्यायुक्त है, कृपा करके हम लोगों को विज्ञान वा राज्यादि ऐश्वर्य की प्राप्ति के लिए अच्छे, कर्म युक्त, आप्त लोगों के मार्ग से सम्पूर्ण प्रज्ञान और उत्तम कर्म प्राप्त कराइए और हमसे कुटिलता युक्त पापरूप कर्म को दूर कीजिए। इस कारण हम लोग आपकी बहुत प्रकार की स्तुति रूप नम्रता पूर्वक प्रंशसा सदा किया करें और सर्वदा आनन्द में रहें।

पद्य–

तू है स्वयं प्रकाश है प्रभो! सबका सिरजन हार तुही।
रसना निशदिन रटे तुम्हीं को! मन में बसता सदा तुही।
कुटिल पाप से हमें बचाते रहना, हरदम दयानिधान।
अपने भक्त जनों को भगवन! दीजे यही विशद् वरदान॥

(इति ईश्वरस्तुतिप्रार्थनोपासना प्रकरणम्)

सांसारिक **अथ स्वस्तिवाचनम्**

ओ३म् अग्नि मीळे पुरोहित यज्ञस्य देवमृत्विजेम! होतरं रत्नधातममा॥ १॥

– ऋ० १/१/१

ओम् स नः पितेव सूनवेऽग्ने सूपायनो भव। सचस्वा नः स्वस्तये॥

– ऋ० १.१.८

ओम् स्वस्ति मिमीता मश्विना भगः स्वस्ति देव्य दितीरनर्वणः।
स्वस्ति पूषा असुरो दधातुनः स्वस्ति द्यावा पृथिवी सुचेतना॥ ३॥

ऋ० ५.५१.११

ओम् स्वस्वेय वायु मुपब्रवामहै सोमं स्वस्ति भुवनस्य यस्पतिः।
बृहस्पतिं सर्वगणं स्वस्तये स्वस्तय आदित्यासो भवन्तु नः॥ ४॥

ऋ० ५.५१.१२

ओम् विश्वेदेवा नो अद्या स्वस्तये वैश्वानरो वसुराग्निः स्वस्तये।
देवा अवन्त वृभवः स्वस्तये स्वस्ति नो रूद्रः पात्वं हसः॥ ५॥

ऋ० ५.५१.१३

ओम स्वस्ति मित्रा वरूणा स्वस्ति पथ्ये रेवति।
स्वस्ति न इन्द्र श्चाग्नि स्वस्तिनो आदिते कृधि॥ ६॥

ऋ० ५.५१.१४.

ओम् स्वस्ति पन्था मनु चरेम सूर्या चन्द्र मसाविव।
पुनर्ददताघ्नता जानता संग में महि॥ ७॥ ऋ० ७.३५.१६

ओम् ये देवानां यज्ञिया यज्ञियानां मनोर्यजत्रा अमृता ऋतज्ञाः।
तेनो रासन्ता मुरूगाय मद्य यूयं पात स्वतिमिः सदा नः॥ ८॥

ऋ० ८.३५..१५

ओम्यमो माता मधु मत्पिन्वते पयः पीयूष द्यौर दिति रद्रिबर्हाः।
उतथ शुष्मान् वृष भरान्त्स्प्न ंसस्तां आदित्यां ंअनुमदा स्वस्तये॥ ९॥

– ऋ० १०.६३.३

ओम् नृ चक्षसो अनिमिषन्तो अर्हणा वृहद् देवासो अमृतत्व मानशु।
ज्योतिरथा अहिमाया अनागसो दिवो वर्ष्माणं वसते स्वस्तये॥ १०॥

— ऋ० १०.६३.४

ओम् सम्राजो ये सुवृद्योयज्ञ माययुर परिहृवृता दधिरे दिवीक्षयम्।
तां आ विवास नमसा सुवृक्ति मिर्म हो आदित्यां अदिती स्वस्तये॥ ११॥

—ऋ० १०/६३/५

ओम् को वः स्तोमं राधति चं जुजोषथ विश्वे देवासो मनुषोय तिष्ठन।
को वोऽध्वरं तुविजाता अरं करद्यो नः पर्षदत्यहः॥ १२॥

ऋ० १०.६३.६

ओम् येम्यो होत्रां प्रथमा मायेजे मनुः समिद्धाग्नि र्मनसा सप्त हो तृमिः।
त आदित्या अभयं शर्म यच्छत सुगान नः कर्त सुपथा स्वस्तये॥ १३॥

— ऋ० १०.६३.७

ओम् ईशिरे भुवनस्य प्रचेतसो विश्वस्य स्थातुर्जगतश्च मन्तवः।
तेनः कृताद कृतादेन सस्पर्यद्या देवासः पिपृता स्वस्तये॥ १४॥

— ऋ० १०.६३.८

ओम् भरेष्विन्द्रं सुहवं हवामहेऽहो मुचं सुकृतं दैव्य जनम्।
अग्निं मित्रं वरुणं सातये भगं द्यावा पृथिवी मरुतः स्वस्तेय॥ १५॥

— ऋ० १०.६३.९

ओम् सुत्रामाणं पृथिवी द्यामने हसं सुशर्माण मदितिं सुप्रणीतिम्।
दैवीं नावं स्वरित्रा मनागसम स्रवन्तीमा रूहेमा स्वस्तये॥ १६॥

— ऋ० १०.६३.१०

ओम् विश्वे यजत्रा अधिवोच तोतये त्रायध्वं नो दुरेवाया अमिहुतः।
सत्यया वो देव हूत्या हुवेम श्रुण्वतो देवा अवसे स्वस्तेय॥१७॥

—ऋ० १०.६३.११

ओम् अपा मीवामप विश्वामनाहुति मपारातिं दुर्विदत्रा मघायत।
ओर देवा द्वेषो अस्मद्यु योत नोरूणः शर्म यच्छता स्वस्तये॥१८॥

— ऋ०१०.६३.१२

ओम् स मर्त्तो विश्व एद्यते प्र प्रजामि र्जायते धर्मस्परि।
यमादित्यासो नयथा सुनीति भिरती विश्वानि दुरिता स्वस्तये॥१९॥

— ऋ० १०.६३.१३

ओम् यं देवासोऽवथ वाज सातौ यं शूर साता मरूतोहिते घने।
प्रातर्यावाणं रथ मिन्द सानसि मरिष्यन्तमा रूहेमा स्वस्तये॥२०॥

— ऋ०१०.६३. १४

ओम स्वस्ति नः पथ्यासु धन्वसु स्वस्त्य वृप्सु बृजने स्वर्वति।
स्वस्ति नः पुत्र कृथेषुयोनिषु स्वस्ति राये मरुतो दद्यातन॥२१॥

—ऋ० १०.६३.१५

ओम् स्वस्ति प्रपथे श्रेष्ठा रेक्णस्वत्यमि या वाममेति।
सा नो अमा सो अरणे निपातु स्वावेशा भवतु देव गोपा॥२२॥

—ऋ० १०.६३.१६

ओम् इषे त्वोर्जे त्वा वायवस्थ देवो वः सविता प्रार्पयतु श्रेष्ठ तमाय
कर्मणऽ आप्यायध्व महन्याऽ इन्द्राय भागं प्रजावतीरनमीवाऽअधक्ष्मा
मा व स्तेनऽईशत माघश सो ध्रुवाऽअस्मिन् गोपतौ स्यात
बह्वी र्यजमानस्य पशून पाहि॥२३॥ यजु० १.१

ओम आ नो भ्रदाः क्रतवोयन्तु विश्वतोऽदबधासोऽअपरीतासः।
दिवे दिवे॥ २४॥ —यजु० २५.१४

ओम् देवानां भद्रा सुमति ऋजूयतां देवाना रातिरामी नो
निवर्त्तताम्। देवाना सख्य मुप सेदिमा वयं देवा न ऽआयुः प्रतिरन्तु
जीवसे॥ २५॥

ओम् तमीशान जगत तस्तस्थुषस्पतिं धियञ्जिन्वमवसे हूमहे वयम्।
पूषा ना यथा वेद समद्वृधे रक्षिता पायुरदब्ध स्वस्तये॥२६॥

—यजु० २५/१८

ओम् स्वस्तिनऽइन्द्रो वृद्ध श्रवाः स्वस्तिनः पूषा विश्वेदः।
स्वस्तिनस्तार्क्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वास्ति नो बृहस्पति देधातु॥२७॥

— यजु० २५.१८

ओम् भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवाः भद्रं पश्येमाक्षर्भियजत्राः।
स्थिरै रङ्गैस्तुष्टुवा सस्तन् र्मिर्व्य शेमहि देवहितं यादायु॥२८॥

—यजु० २५.२१

ओम् अग्न आयाहि बीतये गृणाना हव्य दातये।
नि होता सत्सि बर्हिषि॥ २९॥ सा०पू० १.१.१

ओम् त्वमग्ने यज्ञाना होता विश्वषाऽय हितः।

देवेमिमानुषेजने ॥ ३० ॥ सा०म० पू० १.१.२

ओम् ये त्रिषप्ता: परियन्ति विश्वा रूपाणि बिभ्रत:।
वाचस्पति र्बला तेषां तन्वो अद्य दधातु में ॥ ३१ ॥
— अथर्व० १.१.१

अथ शान्ति करणम्

ओम् शंन इन्द्राग्नी भवताम वोभि: शंन इन्द्रो वरूणा रात हव्या।
शमिन्द्रा सोमा सुविताय शंयो: शंन इन्द्रा पूषणा वाजसातौ ॥१ ॥
ऋ० ७.३५.१

ओम् शंनो भग: शमुन: शंसो अस्तु शंन: पुरन्धि शमु सन्तु राय:।
शंन सत्यस्य सुयमस्य शंस: शंनो अर्यमा पुरुजातो अस्तु ॥२ ॥
ऋ० ७.३५.२

ओम् शंनो धाता शमु धर्ता नो अस्तु शंन उरुची भवतु स्वधामि:।
शंरोदसी बृहती शंनो अद्रि: शंनो देवानां सुहवानि सन्तु ॥३ ॥
ऋ० ७.३५.३

ओम् शंनो अग्निर्ज्योति को अस्तु शंनो मित्रावरुणा वश्विना शम्।
शं न: सुकृतां सुकृतानि सन्तु शंन इषिरो अभि वातुवात: ॥४ ॥
ऋ० ७.३५.४

ओम शंनोद्यावा पृथिवी पूर्व हूतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु।
शंन औषधीर्वनिनो भवन्तु शंनो रज सस्पतिरस्तु जिष्णु: ॥ ५ ॥
ऋ० ७.३५.५

ओम् शंन इन्द्रो वसुर्मि र्देवा अस्तु शमादित्येभिर्वरूण: सुशस:।
शंनो रुद्रोभिर्जलाष: शं नस्त्वष्टाग्नाभिरिह श्रृणोतु ॥ ६ ॥
ऋ० ७.३५.६

ओम् शंन सोमोभवतु ब्रह्म शंनोग्रावाण: शमु सन्तुयज्ञा:।
शंन: स्वरूणां मितयो भवन्तु शंन: प्रस्व शम्वस्तु वेदि: ॥ ७ ॥
ऋ० ७.३५.७

ओम् शंन सूर्य उरुचक्षा उदेतु शं नश्चतसा: प्रदिशो भवन्तु।
शंन: पर्वता ध्रुवयो भवन्तु शंन: सिन्धव: शभु सन्त्वाप: ॥ ८ ॥

ऋ० ७.३५.८

ओम् शंनो अदिति र्भवतु व्रतेमि: शेनो भवन्तु मरुत: स्वर्का:।
शंनो विष्णु: शभु पूषा नो अस्तु शंनो भवित्रं शम्वस्तु वायु ॥ ९ ॥
ऋ० ७.३५.९

ओम् शेनो देव: सविता त्रायमाण: शेनो भवन्तु षसो विभाती:।
शेन: पर्जन्यो भवतु प्रजाभ्य: शन: क्षेत्रस्य पतिरस्तु शम्भु ॥ १० ॥
ऋ० ७.३५.१०

ओम् शेनोदेवा विश्वदेवा भवन्तु शंसरस्वती सह धीमिरस्तु।
शममिषाच: शमु रातिषाच: शंनो दिव्या पार्थिवा: शंनो अप्या: ॥ ११ ॥
ऋ० ७.३५.११

ओम शन: सत्यस्य पतयो भवन्तु शंनो अर्वन्त: शमुसन्तु गाव:।
शंन ऋभव: सुकृत: सुहस्ता: शंनो भवन्तु पितरो हवेषु ॥ १२ ॥
ऋ० ७.३५.१२

ओम् शंनो अज एक पाद् देवो अस्तु शेनोऽहिर्बुध्न्य: शंसमुद्र:।
शंनो अपां न पात्पेरू रस्तु शंन: पृश्नि भर्वतु देव गोपा ॥ १३ ॥
ऋ० ७.३५.१३

ओम् इन्द्रोविश्वस्य राजति। शन्नोऽस्तु द्विपदे शं चतुष्पदे ॥ १४ ॥
यजु० ३५.८

ओम् शन्नो वात: पवताऽ शन्नस्तपतु सूर्य।
शन्न: कनिक्रदेव: पर्जन्योऽभिर्वषतु ॥ १५ ॥ यजु० ३६.१०
ओम् अहानि शं भवन्तु न: श ं रात्री: प्रति धीयताम्। शंन इन्द्राग्नि
भवताम वोमि: शंनऽ इन्द्रा वरूणा रात हव्या। शंन इन्द्रा पूषणा वाज
सातौ शमिन्द्रा सोमा सुविताय शंयो: ॥ १६ ॥ यजु० ३६.११
ओग् शन्नोदेवी रभिष्टय आपोभवन्तु पीतये शंयोरभि स्त्रवन्तु न: ॥१७ ॥
यजु० ३६.१२

ओग् द्यौ: शान्तिरन्तरिक्ष ं शान्ति: पृथिवी शान्ति राप: शान्ति रोषधय: शान्ति:।
वनस्पतय: शान्ति र्विश्वे देवा: शान्ति ब्रह्म शान्ति: सर्वं शान्ति: शान्ति रेव

शान्तिः सामा शान्ति रेधि ॥ १८ ॥ यजु० ३६.१७

ओम्तच्चक्षु र्देवहितं पुरस्ताच्छुक्रमुच्चरत । पश्येमशरदः शतं जीवेम शरदः
शतं शृणुयाम शरदः शतं प्रबुवाम शरदेः शतमदीनाः स्याम शरदः
शतं भूयश्च शरदः शतात् ॥ १९ ॥ यजु० ३६.२४

ओम् यज्जाग्रतोदूर मुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवेति ।
दूरङ्गमं ज्योतिषां ज्योतिरेक तन्मे मनः शिव संकल्प मस्तु ॥ २० ॥
यजु० ३४.१

ओम् येन कर्माण्य पसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषु धीराः ।
यदपूर्वं दक्षमन्तः प्रजाना तन्मेमनः शिव संकल्प मस्तु ॥ २१ ॥
यजु० ३४.२

ओ३म् यत्प्रज्ञान मुत चेतो घृतिश्च यज्जोतिरन्त मृतम् प्रजासु ।
यस्मान्न ऋते किञ्चन कर्म क्रियते तन्मे मनः शिव संकल्प मस्तु ॥२२ ॥
यजु० ३४.३

ओ३म् येनेदं भूतं भुवनं भविष्यत्परि गृहीतम मृतेन सर्वम् ।
येन यज्ञस्तायते सप्त होता तनो मनः शिव संकल्प मस्तु ॥ २३ ॥
यजु० ३४.४

ओ३म् यस्मिन्नृ चः साम यजू ँषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथना भाविवाराः ।
यस्मिंश्चित ँ सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्प मस्तु ॥ २४ ॥
यजु० ३४.५

ओ३म् सुषारथि रश्वानिव यन्मनुष्यान्ने नीयतेऽभीशुर्मिवाजिन इव ।
हृत्प्रतिष्ठ यदजिरं जविष्ठं तन्मेमनः शिवसंकल्प मस्तु ॥ २५ ॥
यजु० ३४.६

ओ३म् सः न पवस्व शं गवे शं जनाय शमर्वते ।
शं राजन्नोषधीभ्यः ॥ २६ ॥ —साम० उत्तरा १.१.३

ओ३म् अभयं नंः करत्यन्तरिक्षमभयं द्यावा पृथिवी उमे इमे ।
उभयं पश्चादभयं पुरस्तादुत्तराद धरादभयं नो अस्तु ॥ २७ ॥
— अथर्व १९.१५.५

ओ३म् अभयं मित्राद भयंम मित्रादमयं ज्ञातादभयं परोक्षात् ।
अभयं नक्तमभयं दिवा नः सर्वा आशा मम मित्रं भवन्तु ॥२८ ॥
नाथ करुणा रूप करुणा आपकी सब पर रहे ॥

— अथर्व १९.१५.६

इति शान्तिकरणम्

[अथ अग्न्याधानम् मन्त्रः]

ओ३म् भुर्भूवः स्वः। गोभिल गृह० प्र० १, ख०१, सूत्र ११ ,

इस मन्त्र का उच्चारण करके ब्राह्मण, क्षत्रिय व वैश्य के घर से अग्निला अथवा घृत का दीपक जला, उससे कपूर में लगा किसी एक पात्र में धर, उसमें छोटी–छोटी समिधा लगा के यजमान वा पुरोहित उस पात्र को दोनों हाथ से उठा, यदि गर्म हो तो चिमटे से पकड़कर निम्न मन्त्र से अग्न्याधान करें।

ओ३म् भूर्भूवः स्वर्द्यौरिव भूम्ना पृथिवी व बरिम्णा ।
तस्यास्ते पृथिवी देवयजनि पृष्ठेऽग्निमन्ना दमन्नाद्यायादधे ॥

इस मन्त्र से वेदी के बीच में अग्निप को धर, उस पर छोटी–छोटी समिधा और थोड़ा कूपर धर, निम्न मन्त्र पड़कर अग्नि को प्रदीप्त करे।

अग्नि प्रदीप्त करने का मन्त्र

ओम् उद्बुध्य स्वाग्ने प्रति जागृहि त्वमिष्टापूर्ते सः सृजेथा
मयं च। अस्मिन्त्सधस्थेऽ अध्युत्तरस्मिन् विश्वे देवा यनमाश्च सीदत ॥

समिदाधान मन्त्राः

अब अग्नि समिधाओं में प्रविष्ट होने लगे तब चन्दन की अथवा पलाश आदि की तीन समिधाऐं आठ–आठ अंगुल की घृत में डूबा उनमें से नीचे लिखे मन्त्रों से एक–एक समिधा को अग्नि में चढ़ाएं।

ओम् अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्व चेद्ध वर्द्धय
चास्मान् प्रजया पशुमिर्ब्रह्म वर्च से नान्नाद्येन समेधय स्वाहा ॥
इदमग्नये जातवेद से– इदन्न मम ॥ १ ॥
—आ० मृह्य १/१०/१२

इस मन्त्र से पहली समिधा–

ओम् समिधाग्निं दुवस्यत घृतै र्बोधयतातिथिम् ।

आस्मिन् हव्या जुहोतन स्वाहा॥ इदमग्नये इदन्नमम॥ २॥
–यजु० ३/१

इससे और–
ओ३म् सुसमिद्धाय शोचिषे घृतं तीव्र जुहोतन।
अग्नये जातवेदसे स्वाहा। इदमग्नये जादवेद से– इदन्न मम॥३॥
– यजु० ३/२

इस मन्त्र से अर्थात् दोनों मन्त्रों से दूसरी समिधा॥
ओ३म् तन्त्वा समिद्भिरङ्गिारो घृतेन वर्द्धयामसि।
बृहच्छोचा यविष्ठ्य स्वाहा॥ इदमग्नयेऽङ्गिरसे इदन्न मम॥ ४॥
– यजु० ३/३

इस मन्त्र से तीसरी समिधा की आहुति देवे।

इन मन्त्रों से समिदाधान करके नीचे लिखे मन्त्र से पाँच घृत आहुति देनी।

[पञ्च घृताहुति–मन्त्रः]

ओम् अयन्त इध्म आत्मा जातवेदस्तेनेध्यस्व वर्धस्य चेद्ध बर्द्धय
चास्मान् प्रजया पशु मिर्ब्रह्मवर्च सेनान्नाद्येन समेधय स्वाहा॥
इदमग्नये जातवेदसे–इदन्न मम। आश्व०गृह्य० १/१०/१२

(जल–सिञ्चन–मन्त्राः)

तत्पश्चात् निम्नलिखित तीन मन्त्रों से, अञ्चलि में जल लेकर क्रमशः पूर्व आदि चारों दिशाओं में जल छिड़कावें–

ओम् अदितेऽनुमन्यस्व॥ – इससे पूर्व दिशा में
ओम् अनुमतेऽनुमन्यस्व॥ – इससे पश्चिम दिशा में
ओम् सरस्वत्यनुमन्यस्व॥ – इससे उत्तर दिशा में
गोमि० गृह्य०– १/३/१–३

ओम् देव सवितः प्रसुव यज्ञं प्रसुव यज्ञपतिं भगाय। दिव्योगन्धर्वः
केतपूः केतं नः पुनातु वाचस्पति र्वाचं नः स्वदतु॥ यजु– ३०/१
इस मन्त्र से वेदी के चारों ओर जल छिड़कावें।
इसके बाद मुख्य होम के आदि और अन्त में जो आहुतियाँ दी जाती

है उनमें से यज्ञ कुण्ड के उत्तर भाग में जो एक आहुति और यज्ञ कुण्ड के दक्षिण भाग में दूसरी आहुति देनी होती है, उन्हें आधारावाज्याहुति कहते हैं, और जो कुण्ड के मध्य में दो आहुतियाँ दी जाती है उनका नाम 'आज्यभागाहुति' है। घृत पात्र में से स्रुवा को भर, अगूंठा, मध्यका और अनामिका से स्रुवा को पकड़ के–

(आधारावाज्याहुति मन्त्रः)

ओम् अग्नेय स्वाहा॥ इदमग्नये– इदन्न मम॥ १॥ यजु० १०/५
इस मन्त्र से वेदी के उत्तर भाग में अग्नि में आहुति दें।
ओम् सोमाय स्वाहा॥ इद सोमाय–इदन्न मम॥२॥ यजु० १०/५
इस मन्त्र से वेदी के दक्षिण–भाग में अग्नि में आहुति दें।

[आज्यभागाहुति मन्त्राः]

ओम् प्रजापतये स्वाहा॥ इदं प्रजापतये–इदन्न मम॥ ३॥ यजु०
ओम् इन्द्राय स्वाहा॥ इदमिन्द्राय–इदन्न मम॥ ४॥ यजु०

उपरोक्त आहुतियाँ देकर नीचे लिखे हुए मन्त्रों से प्रातः काल अग्निहोत्र करें।

[प्रातः काल आहुति के मन्त्र]

ओ३म् सूर्यो ज्योति ज्योतिः सूर्यः स्वाहा॥ १॥
ओम् सूर्यो वर्चो ज्योति वर्चः स्वाहा॥ २॥
ओम् ज्योतिः सूर्यः सूर्यो ज्योतिः स्वाहा॥ ३॥
ओम् सजुर्देवेन सवित्रा सजू रूप सेन्द्रवत्या।
उषाणः सूर्यो वेत् स्वाहा॥ ४॥ यजु० ३/९–१०

(सायंकालीन आहुति के मन्त्रः)

निम्न मन्त्रों से सांयकाल में अग्निहोत्र करें।
ओम् अग्नि र्ज्योतिरग्नि स्वाहा॥ १॥
ओम् अग्नि र्वर्चो ज्योतिर्वर्चः स्वाहा॥ २॥
ओम् अग्नि र्ज्योति र्ज्योति तिरग्नि स्वाहा॥ ३॥
तीसरे मन्त्र को मन में उच्चारण करके मौन आहुति दें।
ओम् सजूर्देवेन सवित्रा सजू रात्र्येन्द्र वत्या।

जुषाणोऽग्नि र्वेतु स्वाहा॥ ४॥ यजु० अ०३म० ९/११०

[प्रातः–सांय कालीन मन्त्राः]

निम्नलिखित मन्त्रों से प्रातः सांय आहुति दें।

ओम् भूरग्नये प्राणाय स्वाहा। इदमग्नये प्राणाय–इदन्न मम॥ १॥

ओम् भुवर्वायवेऽपानाय स्वाहा॥ इदं वायवेऽपानाय–इदन्न मम॥ २॥

ओम् स्वरादित्याय व्यानाय स्वाहा॥ इदमादित्यायव्यानाय–इदन्न मम॥ ३॥

इदमग्निवाटवादित्येभ्यः प्राणापानव्यानेभ्यः– इदन्न मम॥ ४॥

ओम् आपो ज्योति रसोऽमृत ब्रह्म भूर्भुवः स्वरों स्वाहा॥ ५॥

तै० आ० १०/१५

ओम् यां मेघां देव गणाः पितश्चेपासते।

तथा मामद्य मेघयाऽग्ने मेघाविनं कुरु स्वाहा॥ ६॥ यजु० ३२/१४

ओम् विश्वानि देव सवितर्दुरितानि परासुव। यद् भद्रं तन्न आसुव स्वाहा॥ ७॥ यजु० ३०/३ ओ३म् अग्ने नय सुपथारायेऽअस्मान्।

युयोध्यमज्जुहुराणमेनो भूयिष्ठान्ते नमऽउक्तिं विधेम स्वाहा॥ ८॥ यजु० ४०/१६

यदि घृत और सामग्री शेष रहे तो गुरु मन्त्र अथवा विश्वानि देव मन्त्र से तीन या अधिक आहुतियाँ पूर्णाहुति मन्त्र से पूर्व दें।

पूर्णाहुति

ओ३म् सर्वं वै पूर्ण ँस्वाहा॥

ओ३म् सर्वं वै पूर्ण ँस्वाहा॥

ओ३म् सर्वं वै पूर्ण ँस्वाहा॥

इस मन्त्र से तीन पूर्ण आहुति अर्थात् एक–एक बार पढ़के एक–एक करके तीन आहुति देवें।

॥ इति सामान्य होम विधि॥

(पूर्णाहुति–प्रकरणम्) (विशेष यज्ञों में)

[आघारावाज्याहुति मन्त्राः]

ओम् अग्नये स्वाहा॥ इदमग्नये–इदुन्नमम॥

इस मन्त्र से वेदी के उत्तर भाग में।

ओम् सोमाय स्वाहा॥ इदं सामाय–इदन्न मम॥

–गोमि० गृ० १/८/१४

इस मन्त्र से वेदी के दक्षिण भाग में प्रज्वलित समिधाओं पर आहुति देवें। तत्पश्चात्–

[आज्य भागाहुति मन्त्राः]

ओम् प्रजापतये स्वाहा॥ इदं प्रजापतये–इदन्न मम॥

ओम् इन्द्राय स्वाहा॥ इदमिन्द्राय–इदन्न मम॥

इन दो मन्त्रों से वेदी के मध्य में आहुति देनी, उसके पश्चात् उसी घृत पात्र में से स्रुवा को भरके प्रज्वलित समिधाओं पर व्याहृति की चार आहुति देवें।

[व्याहृत्याहुति मन्त्राः]

ओम् भूरग्नये स्वाहा॥ इदमग्नये इदन्न मम॥

ओम् भुवर्वायवे स्वाहा॥ इदं वायवे–इदन्न मम॥

ओम् स्वरादित्याय स्वाहा॥ इदमादित्याय–इदन्न मम॥

ओम् भुर्भुवः स्वरग्नि वाटवा दित्येभ्यः स्वाहा॥

इदमग्नि वाटवादित्येभ्यः इदन्न मम॥ गो० गृ० सू० १/३/४

चारों चार घी की आहुति देकर निम्न मन्त्र से स्विष्टकृत् आहुति दे। यज्ञ घृत की अथवा भात की देनी चाहिए।

ओम् यदस्य कर्मणोऽत्यरीरिचं चद्वा न्यूनमिहाकरम्। अग्निष्टत् स्विष्टकृद् विद्यात् सर्वं स्विष्टं सुहुतं करोतु मे। अग्नये स्विष्ट–कृते सुहुत हुते सर्वप्रायश्चित्ता हुतीनां कामानां समर्द्ध यित्रे सर्वान्नः कामान्त्समर्द्धय स्वाहा॥ इदमग्नये स्विष्ट कृते–इदन्न मम॥

आश्व ०१/१०/५२

इसके एक आहुति करके प्राजापत्याहुति आगे वाले मन्त्र को मन में बोलकर देनी चाहिए–

[प्राजापत्याहुति मन्त्रः]

ओम् प्रजापतये स्वाहा॥ इदं प्रजापतये–इदन्न मम॥

इसको मौन करके एक आहुति देकर चार आज्यहुति घृत की देवे।

[आज्याहुति मन्त्राः]

ओम् भूर्भुवः स्वः। अग्न आयूंषि पवस आ सुवोर्ज मिषं चनः।
आरै बाघस्व दुच्छुना स्वाहा॥ इदमग्नये पवमानाय–इदन्न मम॥
ओम् भूर्भुवः स्वः। अग्नि ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्य पुरोहितः।
तमीमहे महागयं स्वाहा॥ इदमग्नये पवमानाय–इदन्न मम॥
ओम् भूर्भुवः स्वः। अग्ने पवस्व स्वपा अस्मे वर्चः सुवीयम्।
दधद्रयि मयि पोषं स्वाहा॥ इदमग्नये पवमानाय इदन्न मम॥
ऋ० ९/६६/१९–२१

ओम् भूर्भुवः स्वः। प्रजापते नः त्वेदलान्यन्यो विश्वा जातानि परिता वभूवः।
यत्कामास्ते जुहुमस्तन्नो अस्तु वंय स्यामपतयो रयीणाम् स्वाहा॥
इदं प्रजापतये– इदन्न मम॥ ऋ० १०/१२१/१०

इनसे घृत की चार आहुति करके 'अष्टाज्याहुति' के निम्नलिखित मन्त्रों से सर्वत्र मंगल कार्यों में आठ आहुति देवे।

[अष्टाज्याहुति मन्त्राः]

ओम् त्वंनोऽअग्ने वरुणस्य विद्वान देवस्य हेष्ठोऽव यासिसीष्ठाः।
यजिष्ठो वह्नितमः शोशुचानो विश्वा द्वेषांसि प्रभुमुग्ध्यस्मत स्वाहा।
इदमग्नी वरुणाभ्याम् इदन्न मम॥ १॥ ऋ० ४/१/४
ओंसत्वं नो अग्नेऽवमो भवोती नेदिष्ठोऽअस्या उषसो व्युष्टौ।
अवयक्ष्व नो वरुणं रराणो वीहि मृळीकं सुहवो न एधि स्वाहा॥
इदमग्नी वरुणाभ्याम् इदन्न मम॥ २॥ ऋ० ४/१/५
ओम् इमं मे वरुण श्रुधी हवामद्या च मृळय। त्वा–
मवस्युरा चके स्वाहा॥ इदं वरुणाय–इदन्न मम॥ ३॥
ऋ० १/२५/१९

ओम् तत्वा यामि ब्रह्मणा वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानो हविर्भिः।
अहेळ्डमानो वरुणहे बोध्यु रूशंस मान आयुः प्रमोषि स्वाहा॥
इदं वरुणाय–इदन्न मम॥ ४॥ ऋ० १.२४.११
ओम ये ते शतं वरुण ये सहस्रं यज्ञियाः पाशा विततता महान्तेः।
तेमिर्नोऽअद्य सवितोत विष्णु र्विश्वे मुञ्चन्तु मरुतः स्वर्काः स्वाहा॥ ५॥
इदं वरुणाय सवित्रे विष्णवे विश्वेभ्यो देवेभ्यो मरुद्भयः
स्वर्केभ्यः– इदं न मम॥ ५॥ पार० गृ० स्०

ओम् अयाश्चाग्नेऽस्य नमि शस्ति पाश्च सत्यमित्वमयासि।
अयानो यज्ञं वहास्याया नो धेहि भेषजं स्वाहा॥
इदमग्नये अयसे–इदन्नमम॥ ६॥ पार० गृ० स्० १.२.८
ओम् उदुत्तम वरुण पाश मस्मद बाद्यमं विमध्यमं श्रथाय।
अथा वयमादित्य व्रते तवानागसो अदितये स्याम स्वाहा॥
इदं वरुणाय इड दित्याया ऽदितये च इदन्न मम॥ ७॥
ओम् भवतन्नः समनसौ सचेत सावरे पसौ। मा यज्ञ हि
सिष्टं मायज्ञपतिं जातवेदसौ शिवौ भवत मद्य नः स्वाहा॥
इदं जातवेदोभ्याम् इदन्न मम॥ ८॥ यजु० ५.३

इसके बाद यदि पूर्ण मासी या अमावस्या हो तो, पूर्ण मासी या अमावस्या की आहुति देकर तदुपरान्त पूर्णाहुति करें।

पूर्णाहुति मन्त्राः

ओ३म सर्वं वै पूर्णऽ स्वाहा॥
ओ३म् सर्वं वै पूर्णऽ स्वाहा॥
ओ३म् सर्वं वै पूर्णऽ स्वाहा॥

यज्ञ प्रार्थना

पूजनीय प्रभो! हमारे भाव उज्जवल कीजिए।
छोड़ देवे छल–कपट को मानसिक बल दीजिए॥
वेद की बोले ऋचाएं सत्य को धारण करें।
हर्ष में हों मग्न सारे शोक–सागर से तरें॥
अश्व में धार्मिक रचाऐं यज्ञ पर उपकार को।
धार्म मर्यादा चलाकर लाभ दें संसार को॥
नित्य श्रद्धा–भक्ति से यज्ञादि हम करते रहें।
रोग पीड़ित विश्व के, सन्ताप सब हरते रहें॥
भावना मिट जाय मन से, पाप अत्याचार की।
कामनाऐं पूर्ण होवें, यज्ञ से नर–नार की॥
लाभकारी हो हवन हर प्राण धारी के लिए।
वायु जल सर्वत्र हों, शुभ गन्ध को धारण किए॥
स्वार्थ भाव मिटे हमारा प्रेम पथ विस्तार हो।
'इदन्न मम' का सार्थक प्रत्येक में व्यवहार हो॥
हाथ जोड़ झुकाव मस्तक वन्दना हम कर रहे।

यज्ञ रूप प्रभो! हमारे भाव उज्जवल कीजिए।
छोड़ देवे छल कपट को मानसिक बल दीजिए॥

[विश्व कल्याण प्रार्थना]

सर्वे भवन्तु सुखिनः, सर्वे सन्तु निरामया।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा, कश्चिद् दुःख भाग भवेत्॥
सबका भला करो भगवान्, सब पर दया करो भगवान्।
सब पर कृपा करो भगवान्, सबका सब विधि को कल्याण।
सबको दे वेदों का ज्ञान, सबको दो भक्ति का दान॥
हे नाथ सब सुखी हो, कोई न हो दुखारी।
सब हो निरोग भगवन्, धन धान्य के भण्डारी॥
सब भद्र भाव देखें, सन्मार्ग के पथिक हों।
दुःखियाँ न कोई होवे, सृष्टि में प्राण धारी॥

(सुखी बसे संसार)

सुखी बसे संसार सब, दुखिया रहे न कोय।
यह अभिलाषा हम सब की, भगवन् पूरी होय॥ १॥
विद्या, बुद्धि, तेज, बल, सबके भीतर होय।
दूध, पूत, धन-धान्य से, वंचित रहे न कोय॥ २॥
आपकी भक्ति प्रेम से, मन होवे भरपूर।
राग, द्वेष से चित्त मेरा, कोंसो भागे दूर॥ ३॥
मिले भरोसा नाम का, हमें सदा जगदीश।
आशा तेरे धाम की, बनी रहे मम ईश॥ ४॥
पाप से हमें बचाइये, करके दया दयाल।
अपना भक्त बनाय कर, सबको करो निहाल॥ ५॥
दिल में दया उदारता, मन में प्रेम अपार।
हृदय में धैर्य वीरता, सबको दो करतार॥ ६॥
नारायण तुम आप हो, पाप के मोचन हार।
क्षमा करो अपराध सब, कर दो भव से पार॥ ७॥
हाथ जोड़ विनती करूँ, सुनिये कृपा निधान।

साधु-संगत सुख दीजिये, दया नम्रता दान॥ ८॥
सुखी बसे .....

वैदिक आरती

ओ३म् जय जगदीश हरे, स्वामी जय जगदीश हरे।
भक्त जनों के संकट, क्षण में दूर करे। ओ० .....१
जो ध्यावे फल पावे, दुःख विनशे मन का।
सुख सम्पत्ति घर आवे कष्ट मिटे तन का। ओ०.....२
माता-पिता तुम मेरे, शरण गहूँ में किसकी।
तुम बिन और न दूजा आस करूँ जिसकी। ओ०.....३
तुम पूरण परमात्मा तुम अन्तर्यामि।
पार ब्रह्म परमेश्वर, तुम सबके स्वामी। ओ०.....४
तुम करुणा के सागर, तुम पालन कर्त्ता।
मैं सेवक तुम स्वामी, कृपा करो भर्त्ता। ओ०.....५
तुम हो एक अगोचर, सबके प्राणपति।
किस विधि मिलूँ दयामय, मुझको दो सुमति। ओ०.....६
दीन बन्धु दुःख हर्त्ता, तुम रक्षक मेरे।
करुणा-हस्त बढाओ, शरण पड़ा तेरे॥ ओ०.....७
विषय-विकार मिटाओ पाप हरो देवा।
श्रद्धा-भक्ति बढाओ सन्तन की सेवा। ओ०.....८
तन, मन, धन सब कुछ है तेरा।
तेरा तुझको अर्पण क्या लागे मेरा। ओ०.....९

यजमान-आशीर्वाद

हे यजमान श्री..... त्वं सपरिवार धन-धान्यवान् भव, पुत्र पौत्रवान् भव, दीर्घायुष्मान् भव।
ओ३म् सत्या सन्तु यजमानस्य कामाः,
ओ३म् साफला सन्तु यजमानस्य कामाः,
ओ३म् पूर्णा सन्तु यजमानस्य कामाः।

ओम् सौभाग्यमस्तु शुभं भवतु।
ओ३म् स्वस्ति, ओं स्वस्ति, ओम् स्थास्ति॥

[शान्ति पाठ]

ओ३म् द्यौ शान्ति रन्तरिक्ष शान्तिः पृथिवी शान्ति रापः शान्ति रोषधयः शान्ति। वनस्पतयः शान्ति र्विश्वे देवाः शान्ति र्ब्रह्म शान्ति सर्व शान्तिः शान्तिः रेव शान्तिः सामा शान्तिः रेधि।
ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः। यजु०

दर्शेष्टि (अमावस्या–यज्ञ) विधि

कृष्ण पक्ष की अमावस्या और शुक्ल पक्ष की पूर्णमासी के दिन होने वाले पक्षिक–यज्ञ कहते हैं जिनके नाम दर्शेष्टि और पौर्णमोसोष्टि भी है। अमावस्या को दर्श भी कहते हैं अतः अमावस्या के दिन होने वाल यज्ञ दर्श–याग या दर्शेष्टि नाम से प्रसिद्ध है।

पौर्णमासी और अमावस्या के दिन नैत्यिक अग्निहोत्र की आहुति दिये पश्चात् स्थाली पाक= मोहन भोग, मीठा भात, खीर, खिचड़ी मोदक आदि बना के निम्नलिखित मन्त्रों से विशेष आहुति करें–

ओम् अग्नये स्वाह॥ १॥
ओम् इन्द्राग्नीभ्यां स्वाहा॥ ३॥
ओम् विष्णवे स्वाहा॥ ३॥

इन मन्त्रों से स्थाली पाक की तीन आहुति देनी तत्पश्चात 'भूरग्नये स्वाहा' आदि व्याह्रति आज्याहुति चार देनी।

ओ३म् भूरग्नये स्वाहा॥ इदमग्नये इदन्न मम॥ १॥
ओ३म् भुर्ववायवे स्वाहा॥ इदं वायवे इदन्न मम॥ २॥
ओ३म् स्वारादित्याय स्वाहा॥ इदमादित्याय इदन्न मम॥ ३॥
ओ३म् भूर्भुवः स्वरग्नि वाटवादित्येभ्यः स्वाहा॥
इदमग्नि वाटवादित्येभ्यः इदन्न मम॥ ४॥

पौर्णमासेष्टि (पौर्णमासी यज्ञ) विधि

पूर्णिमा के दिन अग्रिम मन्त्रों से विशेष आहुति दें।

ओ३म् अग्नये स्वाहा॥ इदमग्नये–इदन्न मम॥ १॥

ओ३म् अग्निषोमाभ्यां स्वाहा॥ इदमग्नीषोमाभ्याम्– इदन्न मम॥ २॥
ओ३म् र्विष्णेव स्वाहा॥ इदं विष्णेव इदन्न मम॥ ३॥

(इति पक्षेष्टि)

जिनके घर में अभाग्य से प्रतिदिन अग्निहोत्र न होता हो वे पक्षयाग अवश्य करें।

=(संस्कार विधि)

[मंगल कार्यों में वाम् देव्यगान]

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। कंर्या नश्चित्रे आ भवदूती
सदो वृधः सखा। कया शेचिष्ठया वृताः॥ १॥
ओ३म् भूर्भुवः स्वः। कस्त्वा सत्यो मदाना
महिष्ठा मत्सदन्ध सः। दृढा चिढारूजे वसु॥ २॥
ओ३म् भूर्भुवः स्वः। अभी षुणः सखी नाम
वितो जरितृणाम्। शतं भवास्यूतय॥ ३॥

–साम० उत्तरार्चिक अ० १ खण्ड ४
मन्त्र १ से ३

महा वामदेव्यम्

अग्निहोत्र या हवन का सामान

आसन–4	सामग्री देशी घी, गोला, धूप, समिधा
हवन कुण्ड–1	फूल, रूई, दीपक, कलावा, चन्दन या रौली,
तश्ला–1	चावल, बताशे, हरीघास, सुपारी, खांड,
कटोरी–2	मात मीठा, जनेऊ, हरीघास, कलश
चाल–2	दीपश्लाका, गुग्मल, कपूर, किशमिश
कटोरी–2	इलायची, लौंग
गिलास–4	
लोटा–1	
चम्मच–2	

दक्षिणा–दान और अभ्यागत सत्कार

यह वाम देव्य गान होने के पश्चात् गृहस्थ यजमान स्त्री–पुरुष संस्कार के कार्य कर्त्ता, सद्धर्मी, लोक प्रिय, परोपकारी, सज्जन, विद्वान गृहस्थ–ऋत्विक वा त्यागी पक्षपात रहित संन्यासी जो सदा विद्या की बुद्धि और सबके कल्याणार्थ वर्तने वाले हों तथा जितने, ऋत्विक, आचार्य/पुरोहित/ब्रह्मा हों, उसको नमस्कार कर उठावें, सुन्दर पुष्पमाला, आसन, अन्न, जल, वस्त्र, पात्र, गौ, धन आदि के दक्षिणा–दान से उत्तम प्रकार से यथा योग्य यथा सामर्थ्य सत्कार करें।

पश्चात जो कोई देखने ही के लिए आए हों, उनको भी सत्कार पूर्वक विदा करें। जिनको दक्षिणा देनी हो, उनको श्रद्धा से यथेष्ट दक्षिणा देवें। वा जिसको जिमाना हो जिमावें। इसी प्रकार यज्ञ में आये हुए मनुष्यों को यथा योग्य आदर–सत्कार करके स्त्री–स्त्रियों और पुरुष–पुरुषों को प्राप्ति प्रसन्नतापूर्वक विदा करें।

पश्चात् यजमान रुचिपूर्वक यज्ञ शेष तथा उतमान्न का भोजन करें।

यह 'सामान्य विधि' अर्थात् सब संस्कारों में कर्त्तव्य है।

(इति सामान्य प्रकरणम्)

तीसरा–३ पितृयज्ञ

अग्निहोत्र विधि पूर्ण करके तीसरा पितृयज्ञ करें। इसमें जीवित देवों, ऋषियों और पितरों को यथा– माता–पिता, दादा–दादी, नाना–नानी, आचार्य–गुरु, उपाध्याय आदि पूजनीयों की यथावत् श्रद्धा–भाव से सेवा, सुश्रुषा, सहयोग वा उनका संग करना तथा उनकी आज्ञाओं का पालन करना 'श्राद्ध' कहलाता है। तथा अन्न–जल, भोजन, दूध, वस्त्र, औषधि आदि से तृप्त करना 'तर्पण' कहलाता है। श्राद्ध और तर्पण दोनों ही पितृयज्ञ के अंग है और यह जीवित पितरों को ही लागू होते हैं। मृतकों को नहीं। (इति पितृ यज्ञ)

विशेष– प्रत्येक गृहस्थ को प्रतिदिन भोजन करने से पूर्व इन पितरों का श्राद्ध एवं तर्पण करना चाहिए।

चौथा भूतयज्ञ (बलि वैश्व देवयज्ञ)

निम्नलिखित दस मन्त्रों से,

जब भोजन तैयार हो जावे, उसमें से खट्टा, लवणान्न और क्षार

छोड़कर घृत–मिष्ट युक्त अन्न लेकर चूल्हे की अग्नि में निम्न दस मन्त्रों से आहुति दें–

ओम् अग्नये स्वाहा॥ १॥
ओम् सोमाय स्वाहा॥ २॥
ओम् अग्निषोमाभ्यां स्वाहा॥ ३॥
ओम् विश्वेभ्यो देवेभ्यः स्वाहा॥ ४॥
ओम् धन्वन्तरये स्वाहा॥ ५॥
ओम् कुह्वै स्वाहा॥ ६॥
ओम् अनुमत्यै स्वाहा॥ ७॥
ओम् प्रजापतये स्वाहा॥ ८॥
ओम् सह द्यावा पृथिवीभ्याऽ स्वाहा॥ ९॥
ओम् स्विष्टकृते स्वाहा॥ १०॥

तत्पश्चात् निम्नलिखित मन्त्रों से बलिदान करें। एक पत्तल व थाली में पूर्वादि दिशाओं में यथाक्रम भाग रखना यदि भाग रखने के समय कोई अतिथि आ जावे तो उसी को देना अथवा अग्नि में डालना चाहिए–

ओ३म् सानुगायेन्द्राय नमः॥ १॥ इससे पूर्व
ओ३म् सानुगाय यमाय नमः॥ २॥ इससे दक्षिण
ओ३म् सानुगाय वरुणाय नमः॥ ३॥ इससे पश्चिम
ओ३म् सानुगाय सोमाय नमः॥ ४॥ इससे उत्तर
ओ३म् मरुद्भ्यो नमः॥ ५॥ इससे द्वार
ओ३म् अद्भ्यो नमः॥ ६॥ इससे जल स्थान
ओ३म् वनस्पति नमः॥ ७॥ इससे ऊखल स्थान
ओ३म् श्रिये नमः॥ ८॥ इससे ईशान में
ओ३म् भद्रकाल्यै नमः॥ ९॥ इससे नैऋित्य में
ओ३म् ब्रह्मपतये नमः॥ १०॥
ओ३म् वास्तुपतये नमः॥ ११॥ इससे मध्य
ओ३म् विश्वेभ्यो देवेभ्योनमः॥ १२॥
ओ३म् दिवाचारिभ्यो नमः॥ १३॥
ओ३म् नक्तंचारिभ्यो नमः॥ १४॥ इससे ऊपर
ओ३म् सर्वात्मभूतये नमः॥ १५॥ इससे पृष्ठ में

ओ३म् पितृभ्यः स्वधायिभ्यः स्वधा नमः॥ ६॥ इससे दक्षिण तत्पश्चात घृत सहित लवणान्न लेके–

शुनां च पतितानां च श्वपचां पाप रोगिणाम्।
वायसानां कृमिणां च शनकैर्निर्व पेद्भुवि॥ मनु०

अर्थ– कुत्ता, पतित, चाण्डाल, पाप–रोगी, काक और कृमि– इन छः नामों से छह भाग पृथिवी में धरे और वे भाग जिस जिसके है उस–उसको दे देवें–

(इतिबलिवैश्वदेव विधिः)

[पाचवाँ अतिथि यज्ञ]

जो मनुष्य पूर्ण विद्वान, परोपकारी, जितेन्द्रिय, धार्मिक, सत्यवादी, छल–कपटादि दोष रहित, सत्योपदेशक, परम योगी, संन्यासी, नित्य भ्रमण करने विद्या तथा धर्म का प्रचार और अविद्या तथा अधर्म की निवृत्ति सदा करते रहते हैं, वे अतिथि कहलाते हैं।

अतिथि यज्ञ की विधि यह है–

तद्यस्यैव विद्वान व्रातयोऽतिथि र्गृहाना गच्छेत॥ १॥

स्वयमे नमभ्यु देत्य ब्रूयाद् व्रात्य क्वावात्सी र्व्रात्योदकं व्रात्य पर्यन्तु व्रात्य यथा ते प्रिये तथास्तु व्रात्य यथा ते वशस्तथास्तु व्रात्य यथा ते निकामस्तथाऽस्त्विति॥ २२॥ अथर्व०

जब अकस्मात् कोई विद्वान अतिथि गृहस्थों के घर प्राप्त हो, तब उसको गृहस्थ–

१. अत्यन्त प्रेम से उठकर उसे उत्तम आसन पर बैठाए।

२. पश्चात् उससे पूछे– ब्रह्मन्! कल आपने कहाँ निवास किया था?

३. ब्रह्मन्! जल आदि पदार्थ, जो आपको अपेक्षित हों, ग्रहण कीजिए।

४. हे विद्वन्! जिस प्रकार से अपको प्रसन्नता हो, वैसा ही हम लोग करेंगे। जो पदार्थ आपको प्रिय हो, उसकी आज्ञा कीजिए। जिस प्रकार से आपकी कामना पूर्ण हो, वैसी आपकी सेवा करेंगे, जिससे आप और हम लोग परस्पर प्रीतीपूर्वक सेवा और सत्संग पूर्वक विद्या वृद्धि से सदा आनन्द में रहें।

को ५. पश्चात् उससे प्रार्थना करे– हे विद्वन्! हमें अपने सत्य उपदेश से तृप्त कीजिए जिससे हमारे इष्ट मित्र सब आपके उपदेश से विज्ञान युक्त हों और सदा प्रसन्न होके आपको भी सत्य प्रेम और सेवा से सन्तुष्ट रखें। इस प्रकार उनका सत्संग कर उनसे उस ज्ञान–विज्ञान को प्राप्त करें जिससे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की प्राप्ति हो। अपना चाल–चलन भी उन उपदेशों के अनुसार बनावें। परन्तु मिथ्या उपदेशक, स्वार्थी, पाखण्डी, वेदनिन्दक, विजय वृत्ति, शट, कुतर्की, बगुला भगत, वैरागी, खाकी, नागेसाधु, तुरासही वेद विरोधी मनुष्यों का तो वाणि मात्र से भी सत्कार नहीं करना चाहिए।

(इन पञ्च महायज्ञों को स्त्री–पुरुष प्रतिदिन करते रहे।)

(इति अथिति यज्ञ)

वैदिक राष्ट्रीय प्रार्थना

ओ३म् आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्म वर्चसी जायताम आराष्ट्रे राजन्यः शूरऽइषव्यो ऽतिव्याधि महारथो जायताम् दोग्ध्री धेनुर्वोढा नड्वानाशुः सप्ति पुरन्धिर्योषा जिष्णु रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो नः ऽ ओषधय पच्यन्तां योग क्षेमो नः कल्पताम्॥– यजु० २२/२२

ब्रह्मन्! स्वराष्ट में हो, द्विज ब्रह्म तेजधारी।
क्षत्रिय महारथी हो, अरि दल विनाश कारी॥
होवें दुधारू गौएं, पशु अश्व आशुवाही।
आधार राष्ट्र की हों, नारी सुमग सदा ही॥
बलवान सभ्य योद्धा, यजमान–पुत्र होवें।
इच्छानुसार वर्षः, पर्जन्य ताप धोवे॥
फल–फूल से लदी हों, औषध अमोद्य सारी।
हो योग क्षेमकारी, स्वाधीनता हमारी॥

विश्व संगठन प्रार्थना

ओ३म् संसमिद्युवसे वृषन्नग्ने विश्वान्यर्य आ।
इळस्पदे समिध्यसे स नो वसून्या भर॥ १॥

अर्थ– हे प्रभु! तुम शक्तिशाली हो, बनाते सृष्टि को।
वेद सब गाते तुम्हें हैं, कीजिए धन वृष्टि को॥

ओ३म् सं गच्छध्व सं वदध्यं सं वो मंनासि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे सं जानाना उपासते॥ २॥

अर्थ– प्रेम से मिलकर चलो, बोलो सभी ज्ञानी बनो।
पूर्वजों की भाँति तुम, कर्त्तव्य के मानी बनो॥

ओ३म् समानो मन्त्रः समितिः समानी समानं मन सह चितमेषाम।
समानं मन्त्रममि मन्त्रये वः समानेन वो हविषा जुहोमि॥ ३॥

अर्थ– हों विचार समान सबके, चित्त मन सब एक हो।
ज्ञान देता हूँ बराबर, भोग्य पा सब नेक हों॥

ओ३म् समानी व आकृति समाना हृदययानि वः।
समानमस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति॥ ४॥

–ऋ० १०/१९१/१–४

अर्थ– हों सभी के दिल तथा, संकल्प अविरोधी सदा।
मन भरे हों प्रेम से, जिससे बढ़े सुख–सम्पदा॥

वैदिक विनय

(अ) ओ३म् असतो मा सद् गमय तमसो मा ज्योतिर्गमय,
मृत्योर्मा अमृतं गमयेति॥ बृ० उपनिषद्

अर्थ– हे परमेश्वर! आप हमें असत्य से हटाकर सत्य पथ पर ले चलो, अज्ञान–अन्धकार से हटाकर प्रकाश की ओर ले चलो तथा मृत्यु से हटाकर मोक्ष की ओर ले चलो।

(आ) ओ३म् इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम् अपघ्नन्तो अराव्णः।ऋग्वेद

अर्थ पद्य में– हे प्रभु! हम तुमसे कर पावें।
अखिल विश्व को आर्य बनावें॥
फैलें सुख–सम्पत्ति फैलावे।
आप बढ़े प्रिय राष्ट्र बढ़ावे॥
वैर–विघ्न को मार मिटावें।
प्रीति–नीति की रीति चलावे॥

(इ) वेद हमारा धर्म है, आर्य हमारा नाम।
एक ब्रह्म को पूजना, सत्य हमारा काम॥

(ई) द्विज वेद पढ़े सुविचार बढ़े, बल पाये चेढ़ नित ऊपर को।
अविरुद्ध रहे, ऋण पन्थ गहे, परिवार कहें वसुधा भर को॥
ध्रुव धर्म धरे, पर दुःख तन त्याग करें भव सागर को।
विन फेर पिता वर दे सविता, हम आर्य करें भूमण्डल को॥

हम आर्य करें निज जीवन को

[स्नान के मन्त्र]

ओ३म् आपो हिष्ठा मयो भुवस्ता न उर्ज्जे दधातना।
महेरणाय चक्षसे॥ १॥
ओम् यो वः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेह नः।
उशतीरिव मातरः॥ २॥
ओम् तस्मा अरंग माम वोयस्य क्षयाय जिन्वथ।
आपो जनयथा चनः॥ ३॥
ओम् ईशाना वार्याणां क्षयन्ती श्चर्षणीनाम् अपोयाचामि भेषजम॥ ४॥

–अथर्व० १.५/१ से ४

(यज्ञोपवीत) (जनेऊ) मन्त्रः

ओ३म् यज्ञोपवीतं परमं पवित्रं प्रजापते र्यत्सहजं पुरस्तात्।
आयुष्यं अग्र्यं प्रति मुञ्च शुभ्रं यज्ञोपवीतं बल मस्तुतेजः॥
ओम् यज्ञोपवीत मसि यज्ञस्य त्वा यज्ञोपवीतेनो पनह्यामि॥

–पार० गृह० २/२/११

[भोजन मन्त्रः]

ओम् अन्नपतेऽन्नस्य नो देह्यन मीवस्य शुष्मिणः।
॥ ॥ तातार तारिष उर्ज्जं नो धेहि द्विपदे चतुष्पदे॥ १॥

–यजु० ११.८३

(भोजन समाप्ति का मन्त्रः)

ओम् यो यज्ञस्य विन्देत अप्रचेताः सत्यं ब्रवीमि वध इत्से तस्य।
नार्यमणं पुष्यति नो सखायं केवलाद्यो भवति केवलादी॥ १॥

—ऋ० १०/११७/६

यजमान द्वारा व्रत धारण

ओम् अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्य ताम्।
इद महम नृतात्सत्य मुपैमि॥ —यजु० १.५

(पुरोहित द्वारा व्रत का महत्त्व)
(अर्थात् यजमान के रक्षा सूत्र बांधना)

ओ३म् व्रतेन दीक्षा माप्नोति दीक्षयाप्नोति दक्षिणाम्।
दक्षिणा श्रेद्धा माप्नोति, श्रद्धया सत्य माप्यते॥ १॥

—यजु० १९.३०

(पुराना यज्ञोपवीत उतारने का मन्त्र)

ओ३म् एताब्दिन पर्यन्त ब्रह्म त्वं धारितमया।
जीर्णत्वात् परित्यागो गच्छ सूत्र यथा सुखम्॥

वेद माता की स्तुति

ओ३म् स्तुता माया वरदा वेदमाता प्रचोदयन्ताम्
पाव मानी द्विजानाम। आयुः प्राणं प्रजां पशुं
कीर्ति द्रविणं ब्रह्म वर्च सम् अह्यम् दत्त्वा व्रजत ब्रह्म लोकम्॥ १॥

—अथर्व० १८.७१.१

शब्दार्थ— प्रभु कृपा से (मया) मेरे द्वारा (वरदा) वरदात्री, (वेदमाता) वेद—माता, जो प्रभु की कल्याणी वाणी है, उसकी यह (स्तुता) स्तुति की गई है। यह वेद वाणी प्रत्येक मानव को (प्रचोदयन्ताम) प्रगति की ओर सुप्रेरित करने वाली है। यह सबको (आयुः) उत्तम आयु (प्राणम्) शक्ति (प्रजाम) उत्तम सन्तान/प्रजा (पशुम) पशु धन (कीर्तिम्) यश, (द्रविणम्) धन—धान्य, ऐश्वर्यादि, (ब्रह्मवर्चम्) ब्रह्म तेज से युक्त करे तथा (मह्यम्) मुझे (ब्रह्मलोकम्) ब्रह्म लोक/आनन्द धाम (दत्त्वा) देकर (व्रजत) स्थिर करे।

तिलक मन्त्र

ओ३म् स्वस्ति नः इन्द्रो वद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्व वेदाः।
स्वस्ति नस्तार्क्ष्यो अरिष्ट नेमिः स्वस्ति नो बृहस्पति र्दधातु॥

चार वर्ण

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्व और शूद्र ये चार वर्ण होते हैं।

अथ ब्राह्मण स्वरूप लक्षणम्॥

अध्यापन मध्ययनं यजनं याजनं तथा।
दानं प्रति ग्रहञ्चैव ब्राह्मणानाम् कल्पत्॥ —मनु० १.८८

अर्थ— १एक— निष्कपट हो के प्रीती से पुरुष—पुरुषों को और स्त्री—स्त्रियों को पढ़ावे। २(दो) पूर्ण विद्या पढ़े। ३(तीन) अग्निहोत्रादि करें। ४(चार) यज्ञ करावें। ५(पाँच) विद्या अथवा सुवर्ण आदि का सुपात्रों को दान देवें। ३(छठा) न्याय से धनोपार्जन करने वाले गृहस्थो से दान लेवे भी।

इनमें से ३ तीन कर्म—पढ़ना, यज्ञ करना, दान देना धर्म में और तीन कर्म— पढ़ाना, यज्ञ करना, दान लेना जीविका है। पढाके और यज्ञ कराके जीविका करनी उत्तम है। —संस्कार विधि

क्षत्रिय स्वरूप लक्षणम

प्रजानां रक्षणं दान मिज्याध्ययन मेव च।
विषयेष्व प्रसक्तिश्च क्षत्रिस्य समासतः॥ मनु० १.८९

अर्थ— दीर्घ ब्रह्मचर्य से साङ्गोपांग वेदादि शास्त्रों को यथावत पढ़ना, अग्निहोत्रादि यज्ञों का करना सुपात्रों को विद्या सुवर्ण आदि प्रजा को यथायोग्य देना, प्रजाओं का सब प्रकार से सर्वदा यथावत पालन करना। इन तीन क्षत्रियों के धर्म के लक्षणों में और शस्त्र विद्या का पढाना, न्याय घर और लेना में जीविका करना, क्षत्रियों की जीविका है। विषयों में अनासक्त हो के सदा जितेन्द्रिय रहना। लोभ व्यभिचार मद्यपानादि नशा आदि दुर्व्यसनों से पृथक रहकर सुशीलतादि शुभ कर्मों में सदा प्रवृत्त रहना।

(वैश्वरूप लक्षणम्)

पशूनां रक्षणं दान मिज्याध्ययन मेव चे।
वणिक पथं कुसीदं च वैश्वस्य कृषि मेव च॥ मनु० १.१०

अर्थ— वेदादि शास्त्रों का पढ़ना, अग्निहोत्रादि यज्ञों का करना, सुपात्रों को दान देना। ये तीन धर्म के लक्षण और गाय आदि पशुओं का पालन करना, वस्त्रों सुवर्णादि का बेचना, नाना देशों के भाषा, हिसाब, भूगर्भ विद्या, भूमि बीज आदि के गुण जानना और सब पदार्थों के भावाभाव समझना, ब्याज का लेना, खेती की विद्या का जानना, अननादि की रक्षा,

खाद और भूमि की परीक्षा, जोतना, बोना आदि व्यवहार का जानना। ये चार कर्म वैश्य की है। ये गुण कर्म जिस व्यक्ति में हो वह वैश्व, वैश्या और इन्हीं की परस्पर परीक्षा और योग से विवाह होना चाहिए।

(शुद्ध स्वरूप लक्षणम्)

एक मेवहि शूद्रस्य प्रभु कर्म समादिशत्।
एतेषा मेव वर्णानाम् शुश्रुषा मन सूर्यया॥ मनु० १.९१

अर्थ– परमेश्वर ने जो विद्याहीन, जिसको पढ़ने से भी विद्या न आ सके, शरीर से पुष्ट, सेवा में कुशल हो, उस शूद्र के लिए इन ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तीनों वर्णों की निन्दा से रहित प्रीति से सेवा करना यही एक कर्म करने की आज्ञा दी है। ये मूर्खत्वादि गुण और सेवा आदि कर्म जिस व्यक्ति में हो, वह शूद्र और शूद्रा है। इन्हीं की परीक्षा से इन का विवाह और इनको अधिकार भी ऐसा ही होना चाहिए।

इन गुण कर्मों के योग ही से चारों वर्ण होवें तो उस कुल, देश और मनुष्य समुदाय की बड़ी उन्नति होवे अब सब ब्राह्मणादि वर्ण वाले मनुष्य लोग अपने–अपने कर्मों में निम्नलिखित रीति से वर्तें– वेदोदितं स्वकं कर्म नित्यं कुर्याद् तन्द्रितः। तद्धि कुर्वन यथा शक्ति प्राप्नोति परमागतिम॥

मनु० ४.१४

अर्थ– ब्राह्मणादि द्विज वेदोक्त अपने कर्म आलस्य छोड़ के नित्य क्रिया करें। उसके अपने सामर्थ्य के अनुसार करते हुए मुक्ति पर्यन्त पदार्थो को प्राप्त होते हैं।

–संस्कार विधि

उपसंहार– भारतीय समाज की वर्ण व्यवस्था जितनी सुन्दर सुव्यवस्थित और सुदृढ़ है, उतनी विश्व की किसी अन्य संस्कृति में नहीं है। क्योंकि इसका आधार वैज्ञानिक है। मानव समाज को अज्ञान, अन्याय और अभाव के तीन शत्रुओं से हमेशा लड़ना पड़ा है। ब्राह्मण वैज्ञानिक शक्ति का, क्षत्रिय सैनिक शक्ति का, वैश्य आर्थिक शक्ति का प्रतीक था। एवं शूद्र समाज की सेवा का प्रतीक था।

चार आश्रम

मानव जीवन अधिक से अधिक श्रेष्ठ और पवित्र बन सके, इसी ॥

लक्ष्य की पूर्ति के लिए उसको हमारे महर्षियों ने चार भागों में बाँटा है– (१) ब्रह्मचर्य आश्रम (२) गृहस्थ आश्रम (३) वानप्रस्थ आश्रम (४) संन्यास आश्रम

षोलह संस्कार :–

मानव जीवन में उन्नति एवं विकास करने के लिए संस्कार का विशेष महत्व है। मानव की शारीरिक, मानसिक एवम् आत्मिक उन्नति के लिए जन्म से लेकर मृत्यु तक विभिन्न अवस्थाओं के अनुकूल सोलह संस्कारों की व्यवस्था वेद के मनीषी एवं कर्म काण्ड के मर्मज्ञ ऋषि–मुनियों ने बहुत ही सुचारू ढंग से की है। इसलिए यह कहा गया है– 'संस्काराद् द्विज उच्येत' अर्थात् संस्कारों से परिष्कृत मनुष्य ही द्विज कहलाते हैं। अन्यथा संस्कार हीन व्यक्ति द्विज बनने के योग्य नहीं होते और वे धन–धान्य से सम्पन्न होकर भी द्विज ही रहते हैं।

जिस करके शरीर और आत्मा सुसंस्कृत होने से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष अर्थात् मनुष्य रूपी चार फलों को प्राप्त कर सकते हैं। और सन्तान अत्यन्त योग्य होते हैं। इसलिए संस्कार का करना सब मनुष्यों को अति उचित है। (संस्कार विधि भूमिका)

१. गर्भाधान	२. पुंसवन
३. सीमन्तोन्नयन	४. जात कर्म
५. नामकरण	६. निष्क्रमण
७. अन्नप्राशन	८. चूड़ाकर्म (मुण्डन)
९. कर्णवेध	१०. उपनयन
११. वेदारम्भ	१२. समावर्तन
१३. विवाह	१४. वानप्रस्थ
१५. संन्यास	१६. अन्त्येष्टि संस्कार

[रात्री को सोते समय के मन्त्रः] (प्रार्थना)

ओ३म् यज्जाग्रतो दूर मुदैति दैवं तदुसुप्तस्य वथैवैति।
दूरंगमं ज्योतिषां ज्योतिरेकं तन्मे मनः शिव संकल्प मस्तु॥ १॥

ओ३म् येन कर्माण्यपसो मनीषिणो यज्ञे कृण्वन्ति विदथेषुः धीरा।
यद् पूर्वं यज्ञमन्तः प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥ २॥

ओ३म् यत्प्रज्ञानमु चेतो धृतिश्च यज्ज्योतिरन्तरमृतं प्रजासु।
यस्मान्ने ऋते किंचन कर्मक्रियते तन्मे मनः शिवसंकल्पमस्तु॥ ३॥

ओ३म् येनेदंभूतं भविष्यत् परिगृहीतम मृतेन सर्वम्।
येन यज्ञस्तायते सप्त होता तन्मे मनः शिव संकल्प मस्तु॥ ४॥

ओ३म् यस्मिन्नृच साम यज् ऋषि यस्मिन् प्रतिष्ठिता रथानाभाविवाराः।
यशिमिश्चित् सर्वमोतं प्रजानां तन्मे मनः शिवसंकल्प मस्तु॥ ५॥

ओ३म् सुषारथिरश्वानिव यन्मनुष्यन्ने नीयतेऽभीशुमिर्वा जिन इव।
ह्रत्प्रतिष्ठं यदजिरं जविष्ठं तन्मे नमः शिवसंकल्प मस्तु॥ ६॥
यजु० ३४.१–६

ओ३म् ॥

अथ पंच गौड़ मध्ये मुख्य आदिगौड़

ब्राह्मणोत्पत्ति

गुरु (गायत्री मन्त्र)

ओ३म् भूर्भुवः स्वः। तत्सवितुर्वरेण्यम्
भर्गो देवस्य धीमहि। धियो यो नः प्रचोदयाता॥ १॥ यजु० ३६.३

जगत पिता परमात्मा को नमस्कार करके अब संक्षेप से आदि गौड़ ब्राह्मणों की उत्पत्ति लिखते हैं।

प्रथम सृष्टि के आरम्भ काल में सब मनुष्यों की एक ही जाति मानी जाती थी। यह वह समय था जब कि अग्नि, वायु, आदित्य ओर अंगिरा द्वारा क्रम से ऋग्, यजु, साम और अथर्व वेद रचे जा रहे थे। अर्थात् अग्नि ऋषि ने ऋग्वेद, वायु ऋषि ने यजुर्वेद, आदित्य ऋषि ने सामवेद और अंगिरा ऋषि ने अथर्व वेद रचा। तत्पश्चात ऋषियों ने यजुर्वेद के ३१वें अध्याय में ११वें मन्त्र के अनुसार वर्ण व्यवस्था बनाई।

ब्राह्मणोस्य मुखमासीत् बाहू राजन्य कृत।
ऊरूतदस्य यद्वैश्य पद्भ्यांऽ शूद्रो अजायत॥

जिन मनुष्यों का कर्म मुख से उत्पन्न देखा गया अर्थात् वेदों को स्वयं पढ़ने, पढ़ाने वाले ज्ञानवान वैज्ञानिक पदार्थ विद्या को जनाने वाले मनुष्यों का ब्राह्मण वर्ण ठहराया तथा बाहू से उत्पन्न कर्म वाले अर्थात् निर्बल बलवान दुष्टों का ताडन और श्रेष्ठों का सत्कार करने के स्वभाव वाले न्यायकारी प्रजा पालक देखे गए वे क्षत्रिय ठहराये और ऊरू के बल से उत्पन्न कर्म वाले अर्थात् व्यापार विद्या का जानने वाले कृषि कर्म तथा पशुपालक करने वाले वैश्य माने गये और पगों से उत्पन्न कर्म वाले मल से निर्वाह करने वाले मूर्ख शूद्र निश्चय किए गए। इसके पश्चात मनुजी के समय में भी वर्ण व्यवस्था इसी आधार पर थी यथा–

ब्राह्मणों के कर्म

अध्यापन मध्ययनं यजनं याजनं तथा।
दानं प्रति ग्रहञ्चैव ब्राह्मणानाम कल्पयत्॥ मनु०

अर्थ– वेद पढ़ना पढ़ाना, यज्ञ करना कराना, दान देना और लेना ये छः कर्म ब्राह्मणों के थे।

क्षत्रियों के कर्म

प्रजानां रक्षणं दान मिज्याध्ययन मेव च।
विष्येष्व प्रसक्तिश्च क्षत्रिस्य समासतः॥ मनु०

अर्थ– न्याय से प्रजा की रक्षा करना, दान देना, यज्ञ करना, वेद पढ़ना और विषयों में न फंसना ये क्षत्रियों के कर्म थे।

वैश्यों के कर्म

पशुनां रक्षणं दान मिज्याध्ययन मेव च।
वणिक पशं कुसीदं च वैश्यस्य कृषि मेव च॥ मनु०

अर्थ– पशु पालन करना, दान देना, यज्ञ करना, व्यापार करना, ब्याज लेना, खेती करना ये वैश्यों के कर्म थे।

शूद्रो के कर्म

एक मेव हि शूद्रस्य प्रभु कर्म समादिशत.।
एतषा मेव वर्णानाम शुश्रुषा मन सूर्यया। मनु०

अर्थ– निन्दा रहित तीनों वर्णों की सेवा करना यही शूद्रों का कर्म था।

कर्म की प्रधानता

धर्मचर्यया जघन्यो वर्ण पूर्वं पूर्वं
वर्ण मापद्यते जाति परिवृतौ॥ १॥
अधर्माचर्यया पूर्वो वर्णो जघन्यं जघन्य।
वर्णमा पद्यते जाति परि वृतौ॥ २॥ –आपस्तम्ब २.५.११

अर्थ– धर्म के आचारण होने से नीचे वर्ण वाले मनुष्य अपने से ऊँचे वर्ण को प्राप्त हो जाते हैं। १।

और अधर्म के आचरण होने से ऊँचे वर्ण वाले मनुष्य नीचे गिर जाते है। २।

मनुजी ने अपने धर्म शास्त्र के अध्याय 2 श्लोक १६८ में कहते हैं कि–

यो न धीत्य द्विजो वेद मन्यत्र कुरुते श्रमम्।
राजीवन्नव शूद्रत्व माशु गच्छति सान्वय॥ मनु०

अर्थ– जो द्विज (ब्राह्मण) वेद को नहीं पढ़ते अन्यत्र परिश्रम करते हैं वे अपने जीते ही कुल सहित शूद्र हो जाते हैं।

न तिष्ठिति तु यः पूर्वा नोउपासेत पश्च पश्चिमाम्।
स शूद्र वद् बहिष्कार्य सर्व स्माद्विन कर्मण॥ मनु०

अर्थ– जो ब्राह्मण (द्विज) प्रातः काल और सांयकाल सन्ध्या उपासना नहीं करता वह द्विज कुल से निकाल कर शुद्र कुल में डाल देना चाहिए।

स्वाध्यायेन व्रतै र्होमैस्त्रै विद्येनेज्यया सुतैः।
महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनुः॥ मनु० २/२८

अर्थ– सकल विद्या पढ़ने पढ़ाने, ब्रह्मचर्य सत्य–भाषणादि नियम पालने, अग्निहोत्रादि होम, सत्य का ग्रहण असत्य का त्याग और सत्य विद्याओं का दान देने वेदस्थ कर्मोपासना, ज्ञान विद्या के ग्रहण पौर्णमासी इष्टि आदि करने, सुसन्तोत्पत्ति, ब्रह्म, देव, पितृ वैश्वदेव और अतिथियों के सेवन रूप पंच महायज्ञ और अग्निष्टोमादि तथा शिल्प विद्या विज्ञानादि यज्ञों के सेवन से इस शरीर को 'ब्राह्मी' अर्थात् वेद और परमेश्वर की भक्ति का आधार रूप ब्राह्मण का शरीर बनता है। इतने साधनों से, बिना ब्राह्मण शरीर नहीं बन सकता।

ब्राह्मणोत्पत्ति मार्तण्ड के प्रथम प्रकरण में महाभारत का प्रमाण आया है। वैशम्पायन मुनि जी धर्मराज युधिष्ठिर से कहते हैं कि–

न कुले न जात्यावा क्रियामि ब्रीह्मणों भवेत।
चण्डालो पिवृतस्थो ब्राह्मणः स युधिष्ठिर॥

अर्थात् हे युधिष्ठिर कुल और जाति और क्रिया ब्राह्मण नहीं होता चाण्डाल भी यदि उत्तम गुण युक्त होवे तो वह ब्राह्मण है।

सर्वे पै योनि जागर्त्याः सर्व मूत्र पुरीषिणाः।
एकेन्द्रि येन्द्रियार्थाश्च तस्माच्छील गुणोद्विजः॥

अर्थात् सब मनुष्य योनि से पैदा हुए हैं और सब मनुष्य मूत्र पुरीष

करते हैं और इन्द्रियाँ भी सबकी एक ही प्रकार की है और विषय भी सबके एक ही तरह के है इसलिए शील और गुण से ब्राह्मण होता है।

शूद्रोपि शील सम्पन्नो गुणवान ब्राह्मणो भवेत।
ब्राह्मणोऽपि क्रियाहीन शूद्राप्रत्यवदो भवेत॥

अर्थात् शीलवान और गुणवान चाहे शूद्र ही हो तथापि ब्राह्मण होता है और ब्राह्मण कुल में उत्पन्न हुआ क्रियाहीन हो तो वह शूद्र से भी नीच होता है।

पंचोन्द्रियार्णव: घोरं यदि शूद्रोऽपि तीर्णवान्।
तस्मैदान प्रदातव्यम् प्रमेय तस्य युधिष्ठिर॥

अर्थात् पंच इन्द्रिय रूपी घोर समुद्र को जो कभी शूद्र तर जावे तो हे युधिष्ठिर उसी को दान देना चाहिए।

इस समय में वर्ण परीक्षा में उत्तीर्ण होते थे वर्णों की उपाधि कर्मो पर निर्भर थी। ऐसा समय करोड़ो वर्ष बना रहा था। इस समय के ब्राह्मण में आजकल की भाँति भेद–भाव नहीं था। सब ब्राह्मण एक ही जाति थे। इन ब्राह्मणों का काम यह था कि प्रातः काल शौचादि से निवृत्त होकर यज्ञ–हवन किया करते थे। फिर सारे दिन वेदादि धर्म शास्त्रों का पढ़ना होता था। इस समय के ब्राह्मणों की भाषा देववाणी संस्कृत थी इसने व्याकरण को बहुत ऊंचे पद पर पहुँचा दिया था। इस समय का व्याकरण अष्टाध्यायी है जो पाणिनि मुनि ने रचा है। इसी समय में षड्दर्शन बने थे जिन्हें छः शास्त्र भी कहते हैं।

छः शास्त्रों का बनना

(१) शास्त्र– 'न्याय दर्शन' है जिसको गौतम ऋषि ने बनाया था। इससे प्रमाणवाद ही पर विचार किया गया था और प्रमेह के सिद्ध करने के लिए जो प्रमाण आवश्यकीय है और जिन साधनों से विचार करने की आवश्यकता होती है और जिन कारणों से विचार में त्रुटि आ जाती है और जिन कारणों से ज्ञात हो जाता है कि विचार पूरा हो गया उसकी व्याख्या की गई थी और यह भी सूचित कर दिया गया था कि मनुष्य जीवन का उसके मुख्य उद्देश्य पर पहुँचना

बिना इन वस्तुओं के ज्ञान के असम्भव है और उसके निमित्त गौतम जी ने १६ पदार्थों का ज्ञान आवश्यकीय समझा था। १. प्रमाण, २. प्रमेय, ३. संशय, ४. प्रयोजन, ५. दृष्टान्त, ६. सिद्धान्त, ७. अवयव, ८. तर्क, ९. निर्णय, १०. बाद, ११. जल्प, १२ वितंडा, १३. हेत्वाभास, १४. छल, १५. जाति, १६. निग्रह स्थान। इस प्रकार से ऋषि गौतम जी ने प्रमाणवाद को स्पष्ट कर दिया था।

(२) इसके पश्चात कणाद ऋषि हुए। इनके बनाये हुए शास्त्र का नाम 'वैशेषिक दर्शन' है। इन्होंने प्रमेय वस्तुओं का साधम्य और वैधर्म्य बतलाने के निमित्त ही वैशेषिक शास्त्र बनाया था। इस शास्त्र में ऋषि कणाद ने प्रमेय को छः भागों में विभक्त कर दिया था। १. द्रव्य, २. गुण, ३. कर्म, ४. सामान्य, ५. मन, ६. आत्मा। अर्थात् जीवात्मा व परमात्मा इसी प्रकार चौबीस गुण बतलाये।

१. रूप, २. रस, ३. गन्ध, ४. स्पर्श, ५. संख्या, ६. परिमाण, ७. पृथकत्व, ८. संयोग, ९. विभाग, १०. प्रत्व, ११ अप्रत्व, १२. बुद्धि, १३. सुख, १४. सुख, १५. दुःख, १६. इच्छा, १७. द्वेष, १८. प्रयत्न, १९. गुरुतत्व, २०. द्रवत्व, २१. स्नेह, २२. संस्कार, २३. धर्म, २४. अधर्म, २५. शब्द।

इसी प्रकार पाँच प्रकार के कर्म बतलाये।

१. उत्क्षेपण, २. अवक्षेपण, ३. आकुंचन, ४. प्रसारण, ५. गमन और सामान्य विशेषादि बतलाकर बड़ी योग्यता से प्रमेयवाद की व्याख्या कर दी थी।

(३) इसके पश्चात् महात्मा कपिल ऋषि हुए थे जिन्होंने तीसरा शास्त्र बनाया। जिसका नाम 'सांख्य दर्शन' है। कपिल मुनि जी ने कहा था कि प्रमाण और प्रमेय का ज्ञान तो हो गया परन्तु गम्भीर विचारों में प्रत्येक पुरुष कृतार्थ नहीं हो सकता। अतः दुःख और सुख जो तो गुण है उनके आधार की खोज करनी चाहिए जिससे तीन प्रकार के दुःखों की निवृत्ति हो जावे जब उन्होंने देखा कि संसार में तो प्रकार के पदार्थ है एक जड़ दूसरे चेतन अतएव उन्होंने प्रकृति पुरुष का पृथक–पृथक जानना मुक्ति अथवा मोक्ष

का कारण बतलाया। कारण यह है कि– वैशेषिक में बतला चुके थे कि साधर्म्य से सुख तथा वैधर्म्य से दुःख की प्राप्ति होती है। इसी कारण चेतन जीवात्मा को चेतन और अचेतन का ज्ञान आवश्यक है। उन्होंने सिद्ध किया कि जितना जगत है उसका उपादान कारण प्रकृति है, परन्तु प्रकृति जड़ है और दुःख देने वाली है अतएव उसके कार्य जगत में जितनी प्रार्थना की जावेगी कुछ भी सुख की प्राप्ति नहीं हो सकती। इसलिए प्रकृति पुरुष का विवेक करने वाला सांख्य शास्त्र बतलाया और अच्छे प्रकार से इस विषय को सिद्ध किया॥

(४) इसके पश्चात महर्षि पातञ्जलि हुए इनके बनाये शास्त्र का नाम 'योग दर्शन' है। पातंजलि ऋषि ने कहा था कि संसार में जितने दुःख होते हैं सब चित्त की वृत्तियों के विक्षेप से अर्थात् मन के विचारों के स्थिर न होने से उत्पन्न होते हैं। और प्रकृति के पदार्थों को मन जानकर आगे चल देता है। जिससे चित्त वृत्ति एकान्त व शान्त नहीं होती और चित्त के एकान्त न होने से सुख की प्राप्ति नहीं होती अतएव उन्होंने कहा कि योग करके चित्त की वृत्तियों को रोकना चाहिए क्योंकि संसार के समीप पदार्थों से चित्त की वृत्ति का अनुरोध नहीं हो सकता। अतः अनन्त परमेश्वर के साथ अथवा चेतन्य जीवात्मा का परमात्मा के साथ योग होना चाहिए। इसके लिए उन्होंने योग के आठ अङ्ग नियत किये–

१. यम, २. नियम, ३. आसन, ४. प्राणायाम, ५. प्रत्याहार, ६. धारणा, ७. ध्यान, ८. समाधि। इस प्रकार से पातंजलि ऋषि ने अविद्या को दूर करके जड़ से प्रीति का निश्चय करा दिया।

(५) इसके पश्चात जैमिनी ऋषि हुए इन्होंने मीमांसा शास्त्र बनाया। इनका विचार यह था कि योग से चित्त के रोकने में जो बुरे कर्मों से संसार में पैदा हुए अविद्या के संस्कार विघ्न कारक होंगे उनसे कभी भी मन की वृत्तियाँ रूक न सकेंगी। अतएव पहले मन के मल रूपी दोष दूर करने के लिए शुभ नैमित्तिक कर्मों को करना चाहिए जिससे चित्त में दोष का लेप न करे और मन का प्रवाह जो दुष्कर्मो की ओर लग रहा है, हटकर अच्छे कर्मों की ओर लग जावे फिर

उस मल दोष के दूर होने के पश्चात विक्षेप के दूर करने के साधन उपासना योग से काम चल जायेगा। उन्होंने वृत्तदान इत्यादि बहुत से कर्म मल दोष के दूर करने के लिए बतलाये और उनकी विधि अपने–अपने 'मीमांसा शास्त्र' में अच्छे प्रकार से प्रकाशित कर दी।

(६) इसके पश्चात् महर्षि व्यास हुए जिन्होंने 'वेदान्त शास्त्र' बनाया। आगे विचार यह था कि प्रमाण का भी ज्ञान हो चुका और प्रमेय भी जान लिया तथा जड़–चेतन अर्थात् प्रकृति पुरुष को भी पृथक–पृथक समझ लिया और योग करने का विचार भी ठीक है और योग में विघ्न पड़ेगा उसके रोकने को मीमांसा शास्त्र के कर्म भी याद हो गए परन्तु जिस चेतन के साथ योग करना है उसको तो बिल्कुल जाना ही नहीं अतः ब्रह्म के जानने की इच्छा करनी चाहिए। अतएव उन्होंने वेदान्त शास्त्र बनाया, जिसमें केवल ब्रह्म के यथार्थ रूप का ज्ञान हो जावे जिससे इन सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय होता है, इस कारण सम्पूर्ण वेदान्त शास्त्र में ब्रह्म ज्ञान बतलाया।

इसी प्रकार पृथिवी सूर्य चन्द्रमा तथा नक्षत्रों के घूमने और उदय अस्त पर वर्षों तक ध्यान दिया और यहाँ तक हद कर दी कि पृथिवी, सूर्य, चन्द्रमा की परिधियों को ठीक–ठीक नाप लिया और उनके चक्रों का हिसाब लगाकर सूर्य–चन्द्रमा के ग्रहण लगने का गुर ऐसा सच्चा बना दिया था जो आज तक असत्य नहीं हुआ। इस समय के बने शास्त्र का नाम सूर्य सिद्धान्त है। जब शरीर को रोगों से बचाने के उपाय सोचे गए तब ऐसे यन्त्र बनाये गये थे कि जिनके द्वारा औषधियों के गुणों की परीक्षा होती थी और शरीर के अवयवों को चीड़ भाड़कर जोड़ने की विद्या को यहाँ तक हद पर पहुँचाया था किसी का शिर ओर किसी का घड़ भी जोड़ दिया करते थे। इस समय के बने शास्त्र चरक, सुश्रुत, बाणभट्ट और माधव आदि हैं।

९–सूरज कौन गौड़, १०–भट्टनागर गौड़, ११– सूर्यध्वज गौड़, १२– माथुर गौड़ ये ब्राह्मण गौड़ कहलाते हैं। इनमें पंच गौड़ों को मिलाने से

जब ऋग्वेद और अथर्ववेद के मन्त्रों पर विचार किया गया तब अग्नि विद्या और बिजली की विद्या को भी जान लिया था। फिर समुद्र पर दौड़ने वाली सवारी तथा तार भूगर्भादि और आकाश में उड़ने वाली विमान भी बना लिये थे। जब क्षतियों को धनुर्विद्या सिखाने की आवश्यकता हुई तब अग्नि बाण, शीतल बाण और लखसंहारी बाण बनाये गए। इस समय के ऋषि विश्वकर्मा मनु और त्वष्टा आदि हुए है।

जब सामवेद पर ध्यार दिया तब षड्ज, रिषम, गंधार, मध्यम, पञ्चम, घेवत, निषाद इन सात स्वरों को पहिचान कर ऐसे राग रागनी बनाये थे कि जिनसे सर्प, हाथी, सिंह आदि जंगली जानवरों को मोह लेते थे।

इस समय में भी सब ब्राह्मण एक ही जाति के थे। अब यहाँ से बहुत काल पश्चात ब्राह्मणों के दो भेद हो गये जो विंध्याचल के उत्तर और दक्षिण देश में गौड़ और द्रविड़ नाम से पुकारे जाने लगे अर्थात् उत्तर देशवासी गौड़ ब्राह्मण और दक्षिणी द्रविड़ ब्राह्मण कहे जाते थे। फिर एक–एक भेद के पाँच–पाँच भेद हुए अर्थात् पंच गौड़ और पंच द्रविड़ ऐसे दस प्रकार के ब्राह्मण हो गये। यथा–

दस ब्राह्मण

सारस्वता कान्य कुन्जा गौड़ गौड़ उत्कल मैथिला।
पंच गौड़ा इति ख्याता, विध्यस्योत्तर वासिन॥
तर्णाटकाश्च तैलगा द्रविड़ा महाराष्ट्र कां।
गुर्जराश्चेति पंचैव द्रविड़ा विध्य दक्षिणे॥

अर्थ– १–सारस्वत, २–कान्य कुब्ज, ३. गौड़, ४. उत्कल और ५. मैथिल ये पंच गौड़ कहलाते हैं। और विंध्याचल पर्वत के उत्तर में बसते हैं।

१–कर्णाटक, २–तैलंग, ३. द्रविड़, ४. महाराष्ट्र और ५. गुर्जर ये पंच द्रविड़ कहलाते हैं और विंध्याचल दक्षिण देश में बसते हैं।

इस प्रकार पंच गौड़ और पंच द्रविड़ मिलकर दस ब्राह्मण कहलाते हैं। इनके अतिरिक्त और भी बारह प्रकार के गौड़ है। १– मांडव्य (मालवी) गौड़, २–श्री गौड़, ३–श्रीहर्ष गौड़, (गंगा पुत्र गौड़), ४–हरियाणा गौड़, ५–बाल्मीक गौड़, ६– वशिष्ठ गौड़, ७– सौरभ गौड़, ८–दालम्य गौड़,

१७ प्रकार के गौड़ होते हैं। अब तक गौड़ और द्रविड़ों का वृत्तान्त कहा अब आदि गौड़ों का वृत्तान्त लिखते हैं।

सम्पूर्ण ब्राह्मण वंश के केवल २४ ऋषिगोत्र कर्ता हैं। इसके अतिरिक्त इनके वंश में जो ऋषि उत्पन्न उनके नाम से भी गोत्र हुए। यथा–

वशिष्ठ कश्यपोत्रिश्च शांडिल्योवत्स एव च।
सावर्णि को भरद्वाजः शौकालीनश्च गौतमा॥

हुई, कालान्तर में सम्पूर्ण देश की शिक्षा, सभ्यता, संस्कृति के आधार पर गौड़ देश, द्रविड़ देश कहकर पुकारा जाने लगा और क्षैत्रीय नामों से ब्राह्मण वंश भी दो नामों में विभाजित हुआ। यथा गौड़ ब्राह्मण, द्रविड़ ब्राह्मण। आगे चलकर गौड़ ब्राह्मणों में भेद उत्पन्न होने पर यही गौड़ आदि गौड़ ब्राह्मण कहलाए। गौड़ स्मृति में ऐसा लिखा है?

आदौ ये ब्राह्मण जाता ब्रह्मक्षेत्रे तपोघनाः।
आदि गौणश्च तेज्ञेया देव ऋषि देश वासिनः॥

अर्थात् ब्रह्मावर्त, (ब्रह्मक्षेत्र, धर्मक्षेत्र, कुरुक्षेत्र) में आर्यावर्त में आदि काल से जो ब्राह्मण रह रहे हैं या निवास करते हैं उन्हें आदि गौड़ ब्राह्मण जानना चाहिए।

श्री आदि गौड़ ब्राह्मणों का वृतान्त

पंच गौड़ों में कहे जो सारस्वत, कान्य कुब्ज, उत्कल और मैथिल हैं ये भी गौड़ ही हैं, परन्तु भिन्न–भिन्न देशों में बसने से इनके नाम बदल गये हैं, जैसे सरस्वती नदी के किनारे के देशों में बसने से 'सारस्वत' कन्नौज के राज्य में बसने से 'कान्य कुब्ज' उत्कल देश में बसने से 'उत्कल' 'मिथिलापुर' में बसने से मैथिल नाम पड़ा। परन्तु जो गौड़ अचाचक धर्म का पालन करते हुए अपने प्राचीन गौड़ देश में ही निवास करते रहे व अब तक भी आदि गौड़ कहलाते है। सब ब्राह्मणों से पहले इन्हीं आदि गौड़ ब्राह्मणों की प्रतिष्ठा हुई थी जो महाराजा जनमेजय ने की थी अब उसका वर्णन करते है।

इस आर्यावर्त्त के बीच पूर्वकाल में महाराजा जनमेजय एक बड़े चक्रवर्ती राजा हो चुके है। एक समय उन्होंने बहुत बड़ा यज्ञ किया था।

जिससे बड़े–बड़े ऋषि–महर्षि, विद्वान एकत्रित हुए, जिसमें वटेश्वर मुनि को शिष्यों 1444 शिष्यों समेत यज्ञ कराने को बुलाया था, यज्ञ की समाप्ति होने पर राजा जनमेजय अपने गुरू बटेश्वर मुनि को शिष्यों समेत महा–पूजा करके दक्षिणा देने को तैयार हुआ।

बटेश्वर मुनि अयाचक ब्राह्मण थे वे राज प्रतिग्रह भी नहीं करते थे, इसलिए उन्होनें दक्षिणा लेना स्वीकार नहीं किया। तब महाराजा जनमेजय ने कहा कि हे ब्रह्मन्! बिना दक्षिणा दिये यज्ञ पूरा नहीं होता। इस प्रकार राजा के बहुत कहने पर मुनि और शिष्यों ने केवल एक–एक पान का बीड़ा लेना स्वीकार किया, तब महाराजा ने बड़ी चतुरता से 1444 संकल्प पत्रिका लिखवाई अर्थात् हर एक चिट्ठी में एक–एक ग्राम दान का संकल्प था सो एक–एक चिट्ठी एक–एक पान के बीड़ा में रखवाकर चलते समय मुनि और शिष्यों को बाँट दी। तब मुनि और शिष्यों ने महाराजा जनमेजय को आशीर्वाद दिया। जब पान खोलकर देखे गए तब यह गुप्त दान का भेद खुला।

अन्त में यही हुआ कि जो जो ग्राम जिस–जिस को मिला वह उसी में बसा और जिस ग्राम या नगर में जो बसा उसी पर उसका शासन हुआ। जिन को कोई अल्ल व अवटंक भी कहते है। इन बटेश्वर मुनि के 1444 शिष्यों के गोत्र, अत्रि, उद्दालह, उपमन्यु, कविस्त, कश्यप, कात्यायन, कौडिल्य, कौशिक, गर्ग, गौतम, जैमिनी, धनंजय, पाराशर, भारद्वाज, भार्गव, यमदग्नि, वत्स, वशिष्ठ, शांडिल्य, शौनक और सांकृत थे। अब इनकी पदवी, शाखा, सूत्र वेद प्रवरादि का वर्णन करते है।

ऋषि अत्रि गौत्र–१

शासनः– आरठिया, मोरोलिया,
मागर खोइया।
पदवीः– शुक्ल।
प्रवरः– ३ आत्रेय, आर्चन, सश्याव।
वेदः– यजुर्वेद।

शाखाः– माध्यन्दिनी
सूत्रः– गोमिलीय है।

ऋषि उद्दालक गोत्र–२

शासन– खरखेलिया–खेखलिया।
पदवी– पाठक।
प्रवर–३ विश्वामित्र, देवराज, उद्दालक।
वेद– यजुर्वेद।
शाखा– माध्यन्दिनी।
सूत्र– पारस्कर है।

ऋषि उपमन्यु गोत्र–३

शासन– छोडिहा।
पदवी– दीक्षित।
प्रवर– ३ वशिष्ठ, याज्ञवल्क्य, उपमन्यु।
वेद– यजुर्वेद।
शाखा– माध्यमन्दिनी।
सूत्र– पारस्कर है।

ऋषि कविस्त गोत्र–४

शासन– अखवइया, इन्दौरिया, कोहनिया कछेरिया, छनफारिया, जलसुतिया, धौरू, जातिकवाल, निदामपुरियाँ, वछगइया, विचोलिया, माहोनियाँ, मुछमरोड़ा, साकर्सिया।
पदवी– वाजपेयी
प्रवर– ३ कविस्त, देवराज, विश्वामित्रा।
वेद– यजुर्वेद।
शाखा– माध्यन्दिनी।
सूत्र– पारस्कर।

ऋषि कश्यप गोत्र–५

शासन– कैरारिया, घाटिया, डाचोल्या, नारनौलिया, फतेपुरिया, भोगर, मुडलेंनिया, रस्सीवाल, सिरोइया, सेयल।
पदवी– तिवारी।

प्रवर– ३ कश्यप, वत्स, नैधुव।
वेद– यजुर्वेद।
शाखा– माध्यन्दिनी।
सूत्र पारस्कर है।

ऋषि कात्यायन गोत्र–६

शासन– तलवारिया।
पदवी– त्रिपाठी।
प्रवर– ३ कात्यायन, विश्वामित्र, वशिष्ठ।
वेद– यजुर्वेद।
शाखा– माध्यन्दिनी।
सूत्र– पारस्कर है।

ऋषि कौंडिन्य गोत्र–७

शासन– तौंदवाल, नागौरिया, बवेरवाल, बिहटवाल, मानोरिया, सिकरवाल, सोनइयां।
पदवी– अग्निहोत्री।
प्रवर– ३ आत्रेय, आर्चन, सश्याव।
वेद– यजुर्वेद।
शाखा– माध्यन्दिनी।
सूत्र– पारस्कर।

ऋषि कौशिक गोत्र–८

शासन– चकोत्रे–चकवा–वस्तीवाल, किनमासिया।
पदवी– अग्निहोत्री।
प्रवर– ३ कौशिक, देवराज, अघमर्षण।
वेद– ऋग्वेद।
शाखा– आश्वलायनी।
सूत्र– आश्वलायन।

ऋषि गर्ग गोत्र– ९

शासन– नर्रउआ।
पदवी– दीक्षित।

प्रवर– ३ भार्गव, च्यवन, आप्नुवान।
वेद– अथवेद।
शाखा– पिप्पलायनी।
सूत्र– गोमिलीय।

ऋषि गौतम गोत्र–१०

शासन– जटोइया, पंचरग्या, समरेडिया।
पदवी– अग्निहोत्री।
प्रवर– ३ आंगिरस, वार्हस्त्य, गौतम।
वेद– यजुर्वेद।
शाखा– माध्यन्दिनी।
सूत्र– पारस्कर।

ऋषि जैमिनी गोत्र–११

शासन– आगरोइया, आनौरिया, कराहरीवाल, खामपुरिया, घटवारिया, झारोलिया, तेनगुरिया, त्रिगुणायक, धौलपुरिया, धौरमैया, पडीलिया, बढौलिहा, बनवारिया, भीलवार, मुडजेरिया, मोमनियाँ, तेनगुरिया।
पदवी– श्रोतिय।
प्रवर– ३ विश्वामित्र, देवराज, उद्दालक।
वेद– यजुर्वेद।
शाखा– माध्यन्दिनी।
सूत्र– पारस्कर।

ऋषि धनञ्जय गोत्र–१२

शासन– इच्छावात, उटवारिया, छीलवार, टोडीवाल, नाटे, पैगारिया, बामोरिया, भरमुनिया, मादेवाल, सांजानेरिया।
पदवी– त्रिवेदी।
प्रवर– ३ मधुच्छदस्, विश्वामित्र, धनञ्जय।
वेद– सामवेद।
शाखा– कौथुमी।
सूत्र– गोमिलीय।

ऋषि पाराशर गोत्र– १३

उन
कारी,
धार,
नित्य,
है।
ढ़ाना
उद्यत
करके
र्थात्
किन्तु
तन्त्र
तन्त्र

शासन– भगोस्या, चन्द्रनेय्या, छपारिया।
पदवी– मिश्र।
प्रवर– ३ वशिष्ठ, सांकृत, पाराशर।
वेद– यजुर्वेद।
शाखा– माध्यन्दिनी।
सूत्र– पारस्कर।

ऋषि भारद्वाज गोत्र–१४

शासन– कन्नोजिया, जलोथरिया, नौगइयां, बरथौनियां, बांदौलिया, मारश्या, मुडाजरे, रेवाड़िया, सामरे, सकट तोड़, सहज चौकीवाल, सुरोल्या–सुरोरिया, सोनवाल, हरितवाल–हातीवाल।
पदवी– पांडे।
प्रवर– ३ आंगिरस, वार्हस्पत्य, भारद्वाज।
वेद– यजुर्वेद।
शाखा– माध्यन्दिनी।
सूत्र– पारस्कर।

ऋषि भार्गव गोत्र–१५

शासन– अड़ीगिया, किरोट, किकरिवाल, गोधनिया, टिटवारिया, टिलावत, दुलरिया, बहीनीया, बाद्यौरिया, भूसना, मुसरान–मुसरिहा, सौंधारिया।
पदवी– दीक्षित।
प्रवर– ४ भार्गव, च्यवन, जैमिनी, आप्नुवान्।
वेद– यजुर्वेद।
शाखा– माध्यन्दिनी।
सूत्र– पारस्कर।

ऋषि यमदग्नि गोत्र–१६

शासन– खिरारीवाल, बसोड़वाल।
पदवी– श्रोतिय।
प्रवर– ५ वत्स, च्यवन, और्व, अत्यवान, यमदग्नि।
वेद– यजुर्वेद।

शाखा– माध्यन्दिनी।
सूत्र– पारस्कर।

ऋषि वत्स गोत्र–१७

शासन– अटागुरे, अंधोपिया, कोनहिया, जेबरया, धौरेटिया, नोंहियां, पत्सारिया, बहरवाल, बीमवाल, मूंदौरिया, सांगानेरिया।
पदवी– मिश्र।
वेद– यजुर्वेद।
शाखा– माध्यन्दिनी।
सूत्र– पारस्कर।

ऋषि वशिष्ठ गोत्र–१८

शासन– खैरालिया, वसेटिया।
पदवी– शुक्ल
प्रवर– ३ वशिष्ठ, शक्ति, पाराशर। वेद–सामवेद
शाखा– कौथुमी।
सूत्र– पारस्कर।

ऋषि शांडिल्य गोत्र–१९

शासन– नुरेरिया।
पदवी– अग्निहोत्री।
प्रवर– ३ शांडिल्य, असित, देवल।
वेद– सामवेद।
शाखा– कौथुमी।
सूत्र– पारस्कर।

ऋषि शौनक गोत्र–२०

शासनः– सोंकरवाल।
पदवी– द्विवेदी
प्रवर– ३ भारद्वाज, गृत्समद, शौनक।
वेद– यजुर्वेद।

उन
कारी,
धार,
नित्य,
है।
ढ़ाना
उद्यत
करके
र्थात्
केन्तु
तन्त्र
तन्त्र

शाखा– माध्यन्दिनी।
सूत्र– पारस्कर।

ऋषि सांकत गोत्र–२१

शासन– मुडरेंनिया।
पदवी– पांडे।
प्रवर– ३ सांख्यायन, किल, सांकृत।
वेद– यजुर्वेद।
शाखा– माध्यन्दिनी।
सूत्र– पारस्कर।

यह गोत्रों का प्रकरण बहुत परिश्रम करने पर जैसा पूर्वजों से पाया वैसा लिखा। महाराजा जन्मेजय का राज्य ८४ वर्ष ७ मास २३ दिन रहा इनके समय से पीछे १४४४ शासन थे। दूर देशों में बसने तथा अन्य समुदायों में चले जाने के कारण अब पूर्ण संख्या नहीं मिलती जिन 2 सज्जनों को मिले या याद है वे लिखकर भेजने की कृपा करें। अगले संस्करण में छाप दिये जायेंगे।

इस प्रकार अति संक्षेप से यह आदि गौड़ ब्राह्मणोत्पत्ति का प्रकरण समाप्त हुआ। अब १०८ जाति के ब्राह्मणों के नाम लिखते है।

१०८ ब्राह्मणों के नाम

१. आदि गौड़ ब्राह्मण
२. औदीच्य ब्राह्मण
३. श्री मालि ब्राह्मण
४. सिन्ध ब्राह्मण
५. त्रिवेदी महो ब्राह्मण
६. भागड़ ब्राह्मण
७. चातुर्वेदिम्होड़ ब्राह्मण
८. मल्लम होड ब्राह्मण
९. इग्यर्षणाम्होड़ ब्राह्मण
१०. 'घेनाजाम्होड़ ब्राह्मण

११. खडायेत ब्राह्मण
१२. बाजखेड़ा ब्राह्मण
१३. भीतरखेड़ा वाल ब्राह्मण
१४. झारोला ब्राह्मण
१५. अन्तरवेदी ब्राह्मण
१६. जाम्बु ब्राह्मण
१७. बायड़ा ब्राह्मण
१८. कंडोल ब्राह्मण
१९. गालब ब्राह्मण
२०. उनेवाल ब्राह्मण
२१. गिरिनारे ब्राह्मण
२२. मुग्गुलि ब्राह्मण
२३. श्री गौड ब्राह्मण जूने
२४. श्री गौड ब्राह्मण नवे
२५. मेडतवाल ब्राह्मण
२६. औदुम्बर ब्राह्मण
२७. कपित्य ब्राह्मण
२८. वटमूल ब्राह्मण
२९. श्रृगालवाट ब्राह्मण
३०. पाल ब्राह्मण
३१. मीताले ब्राह्मण
३२. शिरपतन मौताला ब्राह्मण
३३. कर्णाटका ब्राह्मण
३४. छः प्रकार के तैलंग ब्राह्मण
३५. पांचाल ब्राह्मण
३६. नियोगी ब्राह्मण
३७. पन्द्रह प्रकार के द्रविड़ ब्राह्मण
३८. महाराष्ट्र ब्राह्मण
३९. चित्यावन कोंकणस्थ ब्राह्मण

उन
कारी,
धार,
नित्य,
है।
ढ़ाना
उद्यत
करके
र्थात्
केन्तु
तन्त्र
तन्त्र

४०. काराष्ट्र ब्राह्मण
४१. त्रिहोत्र ब्राह्मण
४२. दशगोत्र ब्राह्मण
४३. द्वात्रिंशद ग्राम ब्राह्मण
४४. पातित्यग्राम ब्राह्मण
४५. मिथुनहर ब्राह्मण
४६. वेलजी ग्रामवासी ब्राह्मण
४७. गो राष्ट्र ब्राह्मण
४८. केरल ब्राह्मण
४९. तुलब ब्राह्मण
५०. नैवुरू ब्राह्मण
५१. हैब ब्राह्मण
५२. यवराद्रि ब्राह्मण
५३. कदाव ब्राह्मण
५४. काट ब्राह्मण
५५. शिवल्ली ब्राह्मण
५६. दिशावल ब्राह्मण
५७. भटमेवाड ब्राह्मण
५८. त्रिवाडी मेवाड़े ब्राह्मण
५९. चौरासी मेवाड़े ब्राह्मण
६०. बड़नगरे ब्राह्मण
६१. बिसनगरे ब्राह्मण
६२. साठोदरे ब्राह्मण
६३. चिड़त्रोड़े ब्राह्मण
६४. भारड़नागर ब्राह्मण
६५. प्रश्नोत्तरे नागर ब्राह्मण
६६. मालवीय गौड़ ब्राह्मण
६७. श्री गौड़ ब्राह्मण
६८. मगापुत्र गौड़ ब्राह्मण

६९. हरयाणा गौड़ ब्राह्मण
७०. वसिष्ठ गौड़ ब्राह्मण
७१. सौरम गौड़ ब्राह्मण
७२. दालम्य गौड़ ब्राह्मण
७३. सुखसेन गौड़ ब्राह्मण
७४. भट्टनागर गौड़ ब्राह्मण
७५. सूर्यध्वज गौड़ ब्राह्मण
७६. मथुरा के चौबे ब्राह्मण
७७. बाल्मीक ब्राह्मण गुर्जर संप्रदायी
७८. रायकवाल ब्राह्मण
७९. गोमित्र ब्राह्मण
८०. दायमा ब्राह्मण
८१. सारस्वत ब्राह्मण
८२. मित्र गौड़ ब्राह्मण
८३. कपिल ब्राह्मण
८४. तलाजिये ब्राह्मण
८५. खेटुवे ब्राह्मण
८६. नारदी ब्राह्मण
८७. चन्द्रसर ब्राह्मण
८८. बलादरे ब्राह्मण
८९. गयावाल ब्राह्मण
९०. ओडिये ब्राह्मण
९१. आभीर ब्राह्मण
९२. पालीवाल ब्राह्मण
९३. लेटवास ब्राह्मण
९४. सनाड्य ब्राह्मण
९५. कान्यकुब्ज ब्राह्मण
९६. सोमपुरा ब्राह्मण
९७. कांवादसि ब्राह्मण

उन
कारी,
धार,
नित्य,
है।
ढ़ाना
द्यत
रके
र्थात्
केन्तु
तन्त्र
तन्त्र

९८. नादीर्या ब्राह्मण
९९. भारती ब्राह्मण
१००. पुष्कर ब्राह्मण
१०१. गरूड़गलिया ब्राह्मण
१०२. भार्गव ब्राह्मण
१०३. नार्मदीय ब्राह्मण
१०४. नन्दवाण ब्राह्मण
१०५. मैथिल ब्राह्मण
१०६. मैत्रायणी ब्राह्मण
१०७. अमिल्ल ब्राह्मण
१०८. माध्यादिनिया ब्राह्मण

इति श्री पंच गौड़ मध्ये मुख्या आदि गौड़ ब्राह्मोत्पत्ति
(समाप्त)

गोत्र सम्बन्धी संक्षेप जानकारी

विश्वोमित्रो जमदग्नि र्भरद्वाजोऽथ गोतमः।
अत्रिर्वसिष्ठः कश्यप इत्येते गोत्रः कारकाः॥ या० (याज्ञ० स्मृति०)

भारतीय साहित्य के अनुसार वशिष्ठ, विश्वामित्र, भारद्वाज, जमदग्नि, गौतम, अत्रि और कश्यप ऋषियों की सन्तान ही गोत्र कही गई है। इन सात में अगस्त्य की सन्तान को भी गोत्र कहा गया है। ये गोत्र पहले तो सात व आठ ही थे परन्तु आगे चलकर इनकी संख्या हजारों, लाखो तक पहुँच गई। इस दृष्टि से कहा जा सकता है कि किसी परिवार का जो आदि प्रवर्त्तक था, जिस महापुरुष से परिवार चला था उसका नाम परिवार का गोत्र था और उस परिवार के जो स्त्री–पुरुष थे वे आपस में भाई–बहिन समझे जाते थे, क्योंकि भाई–बहिन की शादी अनुचित प्रतीत होती है। अतः एक गोत्र के पुत्र–पुत्री का विवाह वर्जित था।

गोत्र के सम्बन्ध में याज्ञवल्क्य तथा बोधयान का कथन है कि इनकी संख्या आठ न होकर सहस्त्रो है। प्रवर जैसे गोत्र ऋषियों के नाम है,

वैसे प्रवर भी ऋषियों के नाम है। प्रवर–शब्द वृञ् वरणे धातु से बना है, इसका अर्थ हुआ– चुन लेना, प्र का अर्थ है– विशेष तौर पर– जिसे खास तौर पर प्रार्थना के लिए यज्ञ में चुन लिया जावे, उसे प्रवर कहते हैं। ये प्राचीन ऋषि अनेक ऋषियों में से चुन लिये जाने के कारण 'प्रवर' कहलाने लगे। पुरोहित ने जिन ऋषियों को चुन लिया वे पुरोहित के प्रवर हुए क्योंकि यजमान यज्ञ के लिए पुरोहित को चुनता है अतः पुरोहित के प्रवर ही यजमान के भी प्रवर समझे जाने लगे। इस प्रकार पुरोहित के और यजमान के प्रवर एक ही हो गये तथा एक प्रवर के लोगों में विवाह सम्बन्ध निषिद्ध समझा गया क्योंकि एक ही प्रवर के लोग आपस में भाई–बहन के समान है।

प्राचीन काल में जब वेदों का पठन पाठन था उस समय ऋषियों ने वेदों के पठन–पाठन करने की कई एक विधियाँ निर्धारित की थी, उन विधियों को शाखा भेद कहा करते थे। शाखा भेद के प्रवर्तक ही गोत्र–प्रवर्तक होते थे। जो विद्यार्थी जिस शाखा का अध्ययन करता था, वह अपने को उसी शाखा और उसी शाखा पवर्तक ऋषि के गोत्र का कहता था, अतः उस जमाने में एक–एक वेद की अनके शाखाऐं और अनेक गोत्र हो गए थे और उनके ब्राह्मण अनके शाखाओं और गोत्रों में बँट गए थे।

प्राचीन वेद स्मृति उपनिषदादि एवं अर्वाचीन इतिहासकारों के अनेक प्रमाणों से यह स्पष्ट हो चुका है कि सर्व प्रथम सृष्टि के आदि में ब्रह्मा जी से उत्पन्न ब्राह्मण जाति (वर्ण) एक ही प्रकार की थी। इसके बाद ब्रह्मा के १० मानस पुत्र वशिष्ठ कश्यप मरीची आदि ऋषियों से अनेक ऋषिगण हुए और उन ऋषिगणों से पितृगण, देवगण एवं मनुष्य हुए जो आदि काल से ही आदि गौड़ कहलाये। हमारे ऋषि–महर्षि ही हमारे गोत्र कहलाये।

सम्यग व्यवहार सिद्धि के लिए प्रतिपादित की। अर्थात् जिस वंश में जो आदि पुरुष परम कीर्ति वाला, प्रतापी, सिद्ध पुरुष, तपस्वी ऋषि, मनीषी, कुलप्रवर्त्तक आचार्य हुआ हो उसके नाम से ही गोत्र का नामकरण हो गया, जैसे– मनुष्यों को अपनी पहचान बताने के लिए अपने नाम के साथ पिता, पितामह, प्रतितामह आदि का नाम बताकर पूर्ण परिचय देता है। इस कारण आदि काल से आज तक ब्राह्मण जाति के लोग अपने

आपको वशिष्ठ, भारद्वाज, गौतम, अत्रि, कश्यपादि की सन्तान बताकर गौरव का अनुभव करते हैं। यहाँ यह भी लिख देना उचित है कि प्रत्येक गोत्र के साथ प्रतिष्ठा के नाम होते थे। जो जिस ग्राम व स्थान में बसे व जिसकी जैसी योग्यता होती थी उसी प्रतिष्ठा से उसे पुकारा जाता था। जैसे– चतुर्वेदी, द्विवेदी, त्रिवेदी, पाठक, शुक्ल, पांडे, दिक्षित, उपाध्याय, वाजपेयी एवं अग्निहोत्री आदि। इनमें वेद पढ़ने से द्विवेदी, त्रिवेदी आदि कहाये, अध्यापक होने से उपाध्याय, पाठक और भट्टाचार्य कहाये। यज्ञादि कर्मानुष्ठान करने से वाजपेयी, अग्निहोत्री आरि दिक्षित कहाये। श्रोत्रीय और स्मृति कर्मानुष्ठान करने से मिश्र, पुरोहित और शुद्ध निर्मल गुण–कर्मों के अनुष्ठान से शुक्ल कहाये।

गौड़ ब्राह्मण के पाँच भेदों में से एक खास गौड़ ब्राह्मण भी कहा गया है। जिसे आदि गौड़ भी कहते हैं। गौड़ देश में निवास करने वाले ब्राह्मण कहलाये। जाति भास्कर में लिखा है कि– बंगदेश से लेकर अमरनाथ तक गौड़ देश स्थित है। ब्राह्मोत्पत्ति निबन्ध के निर्णय अध्याय में लिखा है कि जो वेदपाठी, तपस्वी ब्राह्मण सर्वप्रथम ब्रह्मक्षेत्र में पैदा हुए थे, वेद के धारण करने वाले तथा सदाचार प्रवर्तक थे। इन्हीं ब्राह्मणों को आदि गौड़ जानना चाहिए।

इति ओम् शम्

ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः

विश्व शान्ति के दस नियम

१. सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।

२. ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामि अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।

३. वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना सब आर्यो का परम धर्म है।

४. सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

५. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।

६. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

७. सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य वर्तना चाहिए।

८. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।

९. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिए किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

१०. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम पालने में सब स्वतन्त्र रहें।

विश्व शान्ति के दस नियम

१. सब सत्य विद्या और जो पदार्थ विद्या से जाने जाते हैं उन सबका आदि मूल परमेश्वर है।

२. ईश्वर सच्चिदानन्द स्वरूप, निराकार, सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, अजन्मा, अनन्त, निर्विकार, अनादि, अनुपम, सर्वाधार, सर्वेश्वर, सर्वव्यापक, सर्वान्तर्यामि अजर, अमर, अभय, नित्य, पवित्र और सृष्टिकर्त्ता है। उसी की उपासना करनी योग्य है।

३. वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है। वेद का पढ़ना–पढ़ाना और सुनना–सुनाना सब आर्यों का परम धर्म है।

४. सत्य के ग्रहण करने और असत्य को छोड़ने में सर्वदा उद्यत रहना चाहिए।

५. सब काम धर्मानुसार अर्थात् सत्य और असत्य को विचार करके करने चाहिए।

६. संसार का उपकार करना इस समाज का मुख्य उद्देश्य है अर्थात् शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक उन्नति करना।

७. सबसे प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार, यथायोग्य वर्तना चाहिए।

८. अविद्या का नाश और विद्या की वृद्धि करनी चाहिए।

९. प्रत्येक को अपनी ही उन्नति से सन्तुष्ट न रहना चाहिए किन्तु सबकी उन्नति में अपनी उन्नति समझनी चाहिए।

१०. सब मनुष्यों को सामाजिक सर्वहितकारी नियम पालने में परतन्त्र रहना चाहिए और प्रत्येक हितकारी नियम पालने में सब स्वतन्त्र रहें।